हास-परिहास

[हास्य-व्यंग विनोद-काव्य का एक मात्र संकलन]

सम्पादक

प्रथम संस्करण] जनवरी १९५६ [मूल्य ढाई रुपया

प्रकाशक—

कल्याणदास एण्ड ब्रदर्स,

बड़े महाराज का मंदिर

Varanasi

वितरक—

बिहार ग्रंथ कुटीर
खजांची रोड
पटना-४

बम्बई बुक डिपो
१६५।१, हरीसन रोड,
कलकत्ता—७

दो फर्में कल्याण प्रेस में तथा शेष काशी मुद्रणालय, विश्वेश्वर गंज,
बनारस में मुद्रित

हास-परिहास

हिन्दी में हास्यरस की कविताओं का प्रायः अभाव सा ही रहा है, और जो कुछ लिखी भी गयी हैं वह समाचार पत्रों या दो एक पुस्तकों के रूप में ही सीमित हैं। प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशित करने का मुख्य उद्देश्य यह रहा है, कि जहाँ तक सम्भव हो हिन्दी के जाने माने हास्य-कवियों की रचनाओं का संकलन एक ही स्थान पर किया जा सके।

यह कहना अतिशयोक्ति होगा कि यह पुस्तक उक्त अभाव की पूर्त्ति कर सकेगी, फिर भी यदि हास-परिहास की कवितायें पाठकों का कुछ भी मनोरंजन कर सकीं तो हम इसके प्रकाशन को सफल समझेंगे।

कौन कहाँ ?

उन सहयोगी कवियों के प्रति हम आभार प्रगट
करते हैं जिन्होंने अपनी कविताओं के
संकलन की स्वीकृति देने की कृपा की

—सम्पादक

'चोंच'

[पं० कान्तानाथ पाण्डेय 'राजहंस' एम. ए. (हिन्दी तथा संस्कृत)]

जन्म—श्रावण कृष्ण एकादशी संवत् १९७१ वि०

आलोचक, कवि, लेखक, प्राध्यापक तथा साहित्यिक

प्रकाशित पुस्तकें-
छेड़छाड़, पानी पांड़े, चूनाघाटी, बेचारे मुंशीजी, महाकवि सांड़, गुरुघण्टाल, मौसेरे भाई हास्यरस की पुस्तकें तथा कादम्बिनी गम्भीर रचना—

उच्चकोटि के हिन्दी संस्कृत के विद्वान, गम्भीर चिन्तक तथा एकान्त-साहित्य सेवी—

वर्तमान-पद—अध्यक्ष
हिन्दी विभाग, हरिश्चन्द्र डिग्री कालेज, काशी
वर्तमान पता—नगवा, काशी ।

चूनाघाटी

[अष्टम सर्ग]

पत्नी के पावन पाँव पूज,
  रानी—पद को कर नमस्कार ।
उस मण्डीवाली कानी को,
  साली—पद को कर नमस्कार ॥

उस तम्बाकू पीनेवाले के,
  नयन याद कर लाल-लाल ॥
लगभग दालान हिला देता,
  जिसका खों-खों-खों कराल ॥

दे अभिव्यक्ति को सुन्दरता,
  अतिशय प्रिय प्राणी-प्राणी का ।
चित्रित करता हूँ मन्दहास,
  निर्मल कविता कल्याणी का ॥

मुझको न किसी का भय बन्धन,
क्या कर सकते अखबार सभी !
मेरी रक्षा करने को है,
यह मेरी कलम तयार अभी !!

क्षणभर फाउण्टेन में स्याही भर
कर सुकवि वृन्द को नमस्कार !
स्वागताध्यक्ष करने बैठा,
अपना स्वागत-भाषण तयार !!

घन-घन-घन घन घन गरज उठी,
घण्टी टेबुल पर बार बार ।
चपरासी सारे जाग पड़े,
जागे मनिआर्डर और तार ॥

कविवर श्री नारायण जागे,
पाँड़े सतनारायन जागे ।
दफ्तर में जगमोहन जागे,
बेढब जागे, बच्चन जागे ॥

जागे कसौंधिया के कपूत,
प्रेस के कम्पोजीटर जागे।
दोहे जागे, छप्पय जागे,
कविता के सब अक्षर जागे॥

लिखते लिखते अपना भाषण
स्वागताध्यक्ष फिर ठहर गया।
लाया चपरासी वह बोतल,
जिसको था लाने शहर गया॥

चपरासी बस आया ही था,
लेकर गिलास, बोतल, झोली।
तब तक फूफाजी आ पहुँचे,
लेकर कुछ कवियों की टोली॥

सुनकर चरमर जूतों का स्वर,
बोतल के मुँह से काग उठा।
सब एक घूँट में पी डाला,
आँखों में छा अनुराग उठा॥

छत पर गीली चादर ओढ़े,
रजनी भर यह तो सोता था।
घर भर में वर्तन तोड़-फोड़,
मर्कट का नर्तन होता था॥

सोकर उठने पर खाता था,
रसगुल्ला काला जाम यहीं।
सन्ध्या को फिर गमछा पहने,
खाता था लँगड़ा आम यहीं॥

घर के अन्दर मदिरा पीकर,
करता था सारे अनाचार।
बाहर खद्दर का कोट पहिन,
लेक्चर देता था धुवांधार॥

"इस शुभ विवाह में" वह बोला,
कवियों का सम्मेलन होगा।
छायावादी कवि आयेंगे,
उनका भी मूक रुदन होगा॥

'चोंच'

बोतल से सोडा उछल-उछल,
टेबुल पर था गिरता छलछल।
वह कूद-कूद लेक्चर देता,
सब कहते थे उसको पागल ॥

चिट पर चन्दा दाताओं के,
लिखता जाता था नाम सकल।
फिर गला फाड़ चिल्लाता था,
बतलाता था प्रोग्राम सकल ॥

वह आया था सम्मेलन के,
सारे दुखड़े यों रोने को।
या आया करने साफ तुरत,
मगही पानों के दोनों को ॥

कल के नीचे पल पल जाकर,
कुल्ला करता, मुँह धोता था।
फिर भी मुख पर उसके निशान,
कत्थे चूने का होता था ॥

स्वागताध्यक्ष खुद लेक्चर दे,
बनता जाता था मतवाला ।
जैसे हिन्दी जग है प्रमत्त,
पीकर नूतन हाला प्याला ॥

टेबुल पर अपने हाथ पटक,
डायस् के ऊपर घूम-घूम ।
कोलाहल था करता अपार,
पागल मनुष्य सा झूम-झूम ॥

भाषण के अन्दर खो खो कर,
खाँसने अभी लगता अपार ।
झाँकती उसे थीं महिलाएँ,
चिक उठा उठा कर बारबार ॥

दर्शक कोलाहल करते थे,
मानो चिल्लाते भिन्न मधुप ।
पर किसे सुनायी पड़ता था,
उसका वह चिल्लाना "चुपचुप" ॥

धमसे जब गिर पड़ता था वह,
  था तोंद नहीं सकता सम्हार।
मुसका उठती थीं महिलाएँ,
  हँस उठते थे लड़के लबार॥

वह चिल्लाता ही जाता था,
  कहता था अच्छा आज शकुन।
जो चन्दा दे दोगे तुरन्त,
  कर देगा सारा काज शकुन।

बिछवा दो कपड़े तूल लाल,
  टँगवा दो माला फूल लाल।
रखवा दो कुर्सी स्टूल लाल,
  रंगवा दो सारा स्कूल लाल॥

तुम दौड़ो दौड़ो रखवा लो,
  कवियों का सब समान यहीं।
तुम भागो भागो रे लड़को,
  लाओ सारा जलपान यहीं॥

'जलपान' शब्द को सुनते ही,
लड़के सारे भरभरा उठे !
मुँह में तो पानी भर आया,
सब के रोयें फरफरा उठे ॥

दोनों से और कसोरों से,
बन गया वहीं पूरा होटल ।
स्वागताध्यक्ष भी चकराया,
हो गया चित्त उसका चञ्चल ॥

तब तक सब कविगण आ पहुँचे,
ले गड्डर लोटा डोर सकल ।
लोटे ले ले कर निकल पड़े,
सत्वर खेतों की ओर सकल ॥

सब शयन कक्ष की जय बोले,
दावत समक्ष की जय बोले ।
उस कार्यदक्ष की जय बोले,
स्वागताध्यक्ष की जय बोले ॥

पूड़ी लाओ, पेड़ा लाओ,
पापड़ लाओ, लाओ मगदल ।
लाओ रबड़ी यह बोल उठा,
पुरवा-पुरवा, पत्तल-पत्तल ॥

करने लगे शेष शिव नन्दन,
स्वागत की तैयारी ।
कवियों को लाने को भेजा,
एक्की, एक्का, लारी !!

तुम कल्पना करो !

तुम कल्पना करो नवीन कल्पना करो।

तुम कल्पना करो !

हो गयीं फजूल ये तमाम डिग्रियाँ।
चाटो शहद लगा-लगाके अब इन्हें मियाँ।
जीने न तुमको देंगी अपटूडेट बीबियाँ।
चुपके से रात में उठो, भागो, देहातिनों—
से शादियाँ करो, नवीन शादियाँ करो।

तुम कल्पना करो !

तुम हो पढ़े लिखे इधर, अपढ़ ये बीबियाँ।
कैसे भला पसन्द हो सकें तुम्हें मियाँ।
तुमको तो चाहिये नवीन जात यौवना।
बुढ़ऊ धरम को छोड़ जवानी के लो मजे।
गलबाहियाँ करो अरे गलबाहियाँ करो।

तुम कल्पना करो !

पढ़ने से फायदा ही क्या, जो धर्म रह गया।
वह क्या सुधार ही न जिसमें देश बह गया?
वह धर्म क्या जवान को जो आँख दिखावे?
युवती युवक के प्रेम में जो टांग अड़ावे।
तुम अपनी वासना की एक मात्र पूर्ति की
बस साधना करो, प्रचंड साधना करो।

तुम कल्पना करो!

आनन्द तुम करोगे, फिर भोगेगा कौन दुःख।
यमपुर के उन मजों से न होना मियाँ विमुख।
उड़ने लगे, जो लात खिलखिला के बोलना।
रक्षा करो, बचाओ, दोहाई ऐ देशमुख,
यह कल की बात आज प्रेम पारणा करो।

तुम कल्पना करो!

तुम गालियाँ दिये चलो महन्थ सन्त को।
तुम 'सेठ' 'जमींदार' की भर्त्सना करो।
एकान्त में उन्हीं के घर मूँडन में छन्द पढ़।
रुपये लो और प्रेम से उदरस्थ यार तुम
मिष्ठान्न और पूड़ियाँ कचौड़ियाँ करो।

तुम कल्पना करो।

नैराश्य गीत

कार लेकर क्या करूँगा ?

तंग उनकी है गली वह, साइकिल भी जा न पाती।
फिर भला मैं कार को बेकार लेकर क्या करूँगा ?

आपने जो लेख भेजा, मैं उसे लौटा रहा हूँ।
मानियेगा मत बुरा, कतवार लेकर क्या करूँगा ?

जब मुझे तज श्रीमतीजी, आज हैं नैहर पधारीं।
बाप, माँ, भाई, बहिन, परिवार लेकर क्या करूँगा ?

छप सकी मेरी अभी तक एक भी कविता न जिसमें,
मैं भला ऐसा सड़ा अखबार लेकर क्या करूँगा ?

मैं जनाना हूँ नहीं, दो ऊँट के मुँह में न जीरा,
ये सड़े लड्डू कहो दो चार लेकर क्या करूँगा ?

———

इक्केवान के प्रति !

ले चल मुझे बुलानाले तू, इक्केवाले धीरे-धीरे !

तीन बजे कालेज से धाये, अभी सातही तो बज पाये !
डेढ़ मील हम हैं चल आये, चल मतवाले धीरे-धीरे !!

धीरे चलना नीति नहीं क्या ? चल धीरे कुछ भीति नहीं क्या ?
घोड़े से है प्रीति नहीं क्या ? रास उठाले धीरे-धीरे !!

जितना यह घोड़ा चलता है, उतना ही कोड़ा चलता है !
कह क्या यह थोड़ा चलता है ? रे सुस्ताले धीरे-धीरे !!

करता क्यों भीषण प्रहार है ? यह कैसा तेरा दुलार है ?
इक्का ही तेरा उलार है। यह बनवा ले धीरे-धीरे !!

यह घोड़ा है मौन मनस्वी, अस्थि चर्म अवशिष्ट तपस्वी !
तू सारथी अपार यशस्वी, यह सुख पा ले धीरे-धीरे !!

कहीं दौड़ता तीव्र पवन सा, कहीं शान्ति नीरव निर्जन सा,
जीवन के उत्थान पतन सा, दृश्य दिखाले धीरे-धीरे !!

अरे देख, घोड़ा यह भागा, रे सम्हाल है बड़ा अभागा!
कुछ विचार ले पीछा-आगा, और सुस्ताले धीरे-धीरे!!

अभी कहाँ था इतना धीमा, अब सरपरता हुई असीमा!
अरे! करा ले अपना बीमा, जान बचा ले धीरे-धीरे!!

अभी दूर मेरा मकान है, अन्धकार-आवृत जहान है!
होता अब तेरा चलान है, लैम्प जला ले धीरे-धीरे!!

यह घोड़ा स्वच्छन्द सरीखा, मनमौजी मतिमन्द सरीखा!
छायावादी छन्द सरीखा, इसे मनाले धीरे-धीरे!!

ले चल मुझे भुलानाले तू, इक्केवाले धीरे-धीरे!

काशीनाथ उपाध्याय

'बेधड़क बनारसी'

बेधड़क बनारसी

[पं० काशीनाथ उपाध्याय 'भ्रमर']

एम. ए., बी. टी., साहित्यरत्न

जन्म तिथि—सन् १६१७ ई०

कवि, निबंधकार, कहानीकार, अभिनेता तथा पत्रकार

संपादन—'आज' साप्ताहिक, 'संसार' साप्ताहिक, 'जनसत्ता'-रविवार अंक आपबीती—मासिक, संसार, बनारस—दैनिक।

संयुक्त संपादन—गांधी-ग्रंथावली, सम्मेलन-विवरण (हरिद्वार) भूतपूर्व प्रचार तथा प्रकाशन मन्त्री प्रसाद परिषद्, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी आदि।

पुस्तकें—विचित्र जानवर, अनोखे-जीवजन्तु (बाल-साहित्य), नौ दो ग्यारह (निबंध), १४४ (कविता-संग्रह), ४२० (रुबाइयाँ), किचकिच (कविता-संग्रह)।

—वर्तमान—

प्रधान सम्पादक—'तरंग' साप्ताहिक

सरायगोवर्धन, चेतगंज,

बनारस।

हमारे नौजवानों की जवानी

हमारे नौजवानों की जवानी देखते जाओ !
नयी चप्पल हुई जैसे पुरानी देखते जाओ !

यह किस अन्दाज से सड़कों पै बल खा-खा के चलते हैं
यह उनके कमर की टूटी कमानी देखते जाओ।
विना मूँछों का चेहरा है, न चेहरे पर ही रौनक है
कहाते मर्द, पर सूरत जनानी देखते जाओ !

जवानी देख कर इनकी बुढ़ापा आ गया हमको
बुढ़ापे मे छिपी बैठी जवानी देखते जाओ !

कभी मर्दों में ढूँढ़ा तो कभी खोजा जनानों में,
नहीं मिलता है कोई इनका सानी देखते जाओ !
हुई है 'ह्वाइट वाशिंग' जैसे कोई काले तख्ते पर
जरा सा गौर कर चेहरे का पानी देखते जाओ !

हुए हैं सूखकर ऐसे गोया टेनिस के 'रैकट' हों
उछलती 'बाल' जैसी जिन्दगानी देखते जाओ !

उफनता जोश तो है, पर उफन कर फिस्स हो जाता,
नहीं है खून, है सोडे का पानी देखते जाओ।
लगाते ही लगाते आंख चश्मा हो गयी सुरमा,
बेचारी बन गयी है सुरमेदानी देखते जाओ।

नुमाइश में इन्हें रखो या चिड़िया घर में रख छोड़ो
यही हैं बाप दादों की निशानी देखते जाओ।

छिपा कर मुझसे आंखें तीन से वो चार कर बैठे।
छिपी चश्में के भीतर आंख कानी देखते जाओ।
अँधेरा था, वो सिनेमा में मेरे पहलू में आ बैठे।
हुई मुझ पर खुदा की मेहरबानी देखते जाओ।

हँसी आती है हमको 'बेधड़क' इन पर न कुछ पूछो
अरे यह हास्यरस की है कहानी देखते जाओ।

———

मैं पत्रकार!

दुनिया में मैं अलबेला हूँ,
करता सबकी अवहेला हूँ,
दुनियावाले चेले मेरे
मै नहीं किसीका चेला हूँ।

सब लोग दंग रह जाते हैं,
मैं करता हूँ ऐसा प्रचार।

मैं पत्रकार मैं पत्रकार।

लोगों का दुःख हरा करता,
धो धो कर घाव भरा करता,
मैं शंकर भी, प्रलयंकर भी,
मैं नाना रूप धरा करता।

बाहर से रहता हूँ उदार,
लेकिन दिल में है अहंकार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

मैं सम्पादक कहलाता हूँ,
लोगों का दिल बहलाता हूँ,
जनता पर रोब जमाता हूँ,
अफसर का पद सहलाता हूँ।

मेरे आफिस के आंगन में,
होती रहती है जीत-हार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

मैं जो चाहूँ वह छप जाये,
मैं जो चाहूँ वह खप जाये,
मैं यदि चाहूँ तो बड़े बड़े—
लोगों की गर्दन नप जाये।

अपना भ्रम-संशोधन करके,
करता हूँ जनता का सुधार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

कवि-लेखक मेरे घर आते,
कुछ मधुर विनय हैं कर जाते,
छपवाकर अपनी रचनाएँ.
सचमुच जीवन में तर जाते।

हें हें का अभिनय होता है
मै पात-पात, वे डार-डार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

जब लगती लोगों को छपास,
जब बनते हैं वे वेद-व्यास,
मुझको गणेश का आसन दे,
बन जाते मेरे चरण दास।

जब भीड़ पड़ी भक्तों पर है
वे क्यों न करें मेरी पुकार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

मैं जितना करता तिरस्कार
वे उतना करते नमस्कार,
कहते हैं बस दीजिये छाप—
जो कहिये दे दूँ पुरस्कार,

इतना सुनकर कुछ हें-हें कर
मैं लेता हूँ खट्टी डकार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

अपने धन का अभिमान जिन्हें,
निज 'लीडरत्व' का ज्ञान जिन्हें,
दुनिया कहती देवता जिन्हें,
दुनिया कहती बेइमान जिन्हें,

वे सब आते हैं मतलब पर,
आफिस में मेरे बार बार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

लीडर आते, प्लीडर आते,
राजाओं के अनुचर आते,
विधवाश्रम के मन्त्री आते,
औ, बड़े बड़े अफसर आते

कहने का मतलब सब आते
बामन, धोबी, कायस्थ, चमार

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

सब करते हैं मेरी जयजय,
मैं हूँ अनादि, मैं हूँ अव्यय,
मैं महादेव-सा बना पूज्य,
मेरा आफिस है देवालय।

आते हैं लेकर पत्र पुष्प
कहते हैं सब धर्मावतार

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

बालू में नौका खेता हूँ,
मैं नेताओं का नेता हूँ,
उसको विधि का लेखा समझो,
मैं जो कुछ भी लिख देता हूँ।

हों पढ़े लिखे या महामूर्ख
सब का बेड़ा कर रहा पार।

मैं पत्रकार, मै पत्रकार।

यद्यपि न किसी से डरता हूँ,
फिर भी कुछ हें हें करता हूँ.
अपनी मनचाही खबरों से
कालमके कालम भरता हूँ,

छपते ही छपते बिक जाता
फिर भी यह दैनिक धुआंधार

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

रह जाते पढ़कर लोग दंग
हो जाता चोखा रंग - ढंग
हैं नसें फड़कने लग जातीं
नर्तन करता है अंग - अंग

मैं मनगढ़न्त सनसनी खेज
देता रहता हूँ समाचार ।

मैं पत्रकार, मै पत्रकार ।

मुझमें सेवक बनने का दम
'मैं' भी बन जाता है जब 'हम'
मुझको न किसी की चिन्ता है
चिर जीवै कैंची और कलम

कैंची से करता कतरब्योंत
यह कलम प्रबल करती प्रहार

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार ।

लेखों में रमता रहता मन,
फाइलें पुरानी मेरा धन,
मेरी पूँजी है बहुत बड़ी,
अगणित अखबारों का कतरन।

पाठकगण समझ न पाते हैं
मेरी कैंची का चमत्कार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

करती सबका संहार कलम,
उगला करती अंगार कलम,
हो तोप टैंक तलवार भले,
करती सबको बेकार कलम।

सब कहते हैं 'बेधड़क' इसे
यह निराकार यह निर्विकार।

मैं पत्रकार, मैं पत्रकार।

मैं किसको किसको प्यार करूँ

मेरे आंगन में भीड़ लगी, मैं किसको किसको प्यार करूँ?

ये सास-ससुर साली-साले
बीबी, बच्चे, औ' घरवाले
ये दिली दोस्त गोरे-काले

सब मुझे 'डियर' कहते हैं प्रिय, किसका किसका इतबार करूँ?

कुछ लीडर, कुछ अध्यापक हैं
कुछ पत्रकार, सम्पादक हैं
कुछ मुद्रक और प्रकाशक हैं

अपने कागज की नैया को इस सागर में क्या पार करूँ?

कुछ कविवर हैं, कुछ शायर हैं,
कुछ डायर हैं, कुछ कायर हैं,
कुछ ट्यूब और कुछ टायर हैं,

भारत-रक्षा का भय मुझको कैसे इनका व्यापार करूँ?

कुछ रोते हैं, कुछ हँसते हैं,
कुछ मँहगे हैं, कुछ सस्ते हैं,
सब ऊबड़खाबड़ रस्ते हैं,

मेरा दिल बना बैलगाड़ी, मैं कैसे मोटरकार करूँ ?

सब पीनेवाले, मैं साकी
वे हैं अनेक, मैं एकाकी
कुछ भी न बचेगा क्या बाकी

सब चाह रहे मैं टें बोलूँ, मैं कैसे निज शृंगार करूँ ?

कुछ प्रेमी असफल बने हुए,
कुछ प्रेमी पागल बने हुए,
कुछ प्रेमी खटमल बने हुए,

हैं काट रहे मुझको प्रतिपल मैं किसपर प्रबल-प्रहार करूँ ?

कुछ हृदय खोल दिखलाते हैं,
कुछ प्यार प्यार चिल्लाते हैं,
कुछ यार यार हकलाते हैं,

जब ईश्वर ने दी दो आँखें मैं कैसे आँखें चार करूँ ?

उन छः कवियों के प्रति

ओ कवियों, मेरे आंगन की
यह हरी घास चरनेवालों;
ओ कवियों, अपनापन खोकर
साइक चुम्बन करनेवालों।

ओ कवियों, अपनी नाक कटा
अपना पाकेट भरनेवालों,
उस परब्रह्म ईश्वर से भी
ओ कभी नहीं डरनेवालों।

जो काम किया है अब तुमने
वह तो कवियों का कर्म नहीं।
तुम यहां गये कविता पढ़ने
क्यों आयी तुमको शर्म नहीं।

ठंढे होकर कुछ सोचो तो,
क्या खून तुम्हारा गर्म नहीं,
चांदी के टुकड़ों के आगे
क्या याद रहा निज धर्म नहीं।

तुम भले मित्र बन लो लेकिन
अब मैं न तुम्हारा मित्र अरे।
इसलिए कलम टूटी लेकर
हूँ चला खींचने चित्र अरे।

हिन्दी की छाती पर चढ़कर
तुम सब निकले, निर्भय निकले।
हिन्दी में केवल छः निकले।
छिः, तुम सब केवल छै निकले।

उस तीस दिसम्बर को देखा
इन फटे हुए पेबन्दों को
चांदी के टुकड़ों पर नर्तन
करनेवाले इन बन्दों को।

उस तीस दिसम्बर को जगने
था सुना तुम्हारे छन्दों को,
उस तीस दिसम्बर को जगने
देखा इन छै जयचन्दों को।

यह मैं न समझ पाया अबतक
तुम सब कवि या कविकुल कलंक,
तुम षटपद हो या हो बिच्छू,
मारा तुमने क्यों हाय डंक।

जिस हिंदी के तुम सब कवि हो,
जिस हिन्दी में कविता करते,
उस हिन्दी की चिन्दी करने
वाले घर में तुम पग धरते।

धिक्कार तुम्हें हिन्दी—द्रोही
इतना मत तुम अन्याय करो
ऐसे गुनाह बेलज्जत पर
तोबा कर लो कुछ हाय करो ॥

*

बेधड़क दोहावली

ग़ुस्सा ऐसा कीजिए, जिससे होय कमाल ।
जामुन सा मुखड़ा तुरत बने टमाटर लाल ॥

सब चीजों का भाव लख, दिल है डाँवाडोल ।
हुआ न क्यों इस पेट पर सरकारी कंट्रोल ॥

भारतकी सरकार का, खूब गर्म है खून ।
मुँहसे निकली बात जो, वही बनी कानून ॥

कितने ही अखबार चट, जायेंगे टें बोल ।
कागज पर जो बेधड़क, हुआ नया कंट्रोल ॥

नहीं जानतीं श्रीमती, बाहरका कुछ हाल ।
साड़ी जो न मिली उन्हें, कर बैठीं हड़ताल ॥

चले रेत पर किस तरह, यह जीवनकी नाव ।
सब चीजों का 'बेधड़क', हुआ भाव बे-भाव ॥

कवि सम्मेलन में कटी, है होली की रात ।
मेढक गण हर्षित हुए, रंगोंकी बरसात ॥

हम हैं खटमल, हम हैं खटमल

रक्तिम है तन, रक्तिम है मन,
रक्तिम है यह, सारा जीवन,
रक्तिम है जीवन का गायन,
रक्तिम है जीवन का क्रंदन,

हैं कभी कठिन है कभी सरल
हम हैं खटमल हम हैं खटमल ।

क्या सुन लोगे तुम आत्म-कथा ?
क्या सुन लोगे तुम मधुर व्यथा ?
तुम इसे प्रकाशित कर दोगे,
इसका हमको कुछ पता न था !

अखबारों में हम घुस बैठे
यह आज देख हो गये विकल ।

मत अधम अछूत हमें समझो,
रावण का दूत हमें समझो,
यम के वैदेशिक मंत्री का,
दिल्ली स्थित दूत हमें समझो,

हम सदा मूक वक्तव्यों से
हैं मचा दिया करते हलचल।

शोणित से पैदा हम होते,
हम रक्त-बीज के हैं पोते,
हम उन्हें जगाया करते हैं
जो रहते हैं हर दम सोते।

फिर भी ऐसे दुनियाँ वाले
करते रहते हमको घायल।

मानवी रक्त के हम शोषक,
साम्राज्यवाद के हम पोषक,
हम कहाँ नहीं, तुम देखे हो,
कुर्सी टेबुल तकिया तोशक,

खटिया मचिया कालर कमीज
दर-दर पर हम बसते प्रतिपल।

जीवन संग्राम किया करते,
हम सच्चा काम किया करते,
जो तंग हमें करते उनकी
हम नींद हराम किया करते।

रजनी की नीरव बेला में
नित होता रहता है दंगल।

सब कहते यही काल-सेना,
यह महा कठिन कराल सेना,
लोगों के खटिया बिस्तर पर
चल पड़ती जभी लाल सेना।

जमकर मोरचा लेने वाले
हम हैं मार्शल, हम हैं जनरल।

हम सदा काटते हैं कावा,
हम लुक छिप बोल रहे धावा,
हम दुर्बल क्रांति मचा देंगे,
बस यही हमारा है दावा।

नित हाहाकार मचाते हैं
हम सैनिक छापामार प्रबल।

हम नित अभिसार किया करते,
लोगों से प्यार किया करते,
प्राणों को लिये हथेली पर
बेधड़क शिकार किया करते।

यह गतिविधि और प्रगति लखकर
नर-नारी हो जाते चंचल।

क्यों हमें खून का है टोटा,
क्यों होता है मानव मोटा,
इसलिए चूस कर हम उसको
करते अपना पूरा कोटा।

इसमें तो कुछ अन्याय नहीं
हम लेते हैं अपना सम्बल।

हम प्रगतिशील हैं बढ़ जाते,
दीवारों पर भी चढ़ जाते,
हम चिपक-चिपक कर कपड़ों पर,
बन लाल सितारे अड़ जाते।

हमसे शोभित होता बिस्तर
हम रत्न सदृश, वह दुग्ध धवल।

हमको तो बस यह है रोना
दुनिया में अपनापन खोना,
वे पीट रहे खटिया हरदम
क्या खटक रहा खटमल होना?

उस पर भी सूने कोटर में
हैं डाल रहे वे जलता जल।

हँसाइयाँ

आदमी को अब निपोरे खीस होना चाहिये,
चंट हो पर साथ-साथ रईस होना चाहिये।
'बेधड़क' अनुभव यही बतला रहा है आजकल
बीस क्या अब चार सौ इक्कीस होना चाहिये।

जमाना है कि किस्मत की हमें गोटी नहीं मिलती,
मुड़ाकर हमने सिर देखा कहीं चोटी नहीं मिलती,
पुरानी रोशनी में औ' नया में फर्क इतना है—
उसे इज्जत नहीं मिलती, इसे रोटी नहीं मिलती।

यह खबर जब से छपी दिल्ली के लीगी 'डान' में
मिल रहा गदहों को भी मेवा है पाकिस्तान में,
'बेधड़क' चिंतित बहुत हैं आजकल धोबी यहाँ
एक भी गदहा न रह जायेगा हिन्दुस्तान में।

देखिये, यह सीन कितना ग्रैण्ड है
देह है या साइकिल का स्टैण्ड है।
हो भले सूरत हमारी इण्डियन,
दिल हमारा मेड इन इँगलैण्ड है।

वह जमाने के बराबर हो गयीं
पालकी से आज मोटर हो गयीं।
'बेधड़क' वालंटियर ही रह गये
श्रीमती जी किन्तु लीडर हो गयीं।

जो मिल रहा पीने को जवानी में दूध है
कहने के वास्ते वह निशानी में दूध है
मैं 'बेधड़क' समझ नहीं सका अभी तलक
यह दूध में पानी है या पानी में दूध है।

उस खुदाका नहीं कानून समझते हैं वे
मुझको हँसने का ही मजमून समझते हैं वे।
'बेधड़क' क्या करूँ मैं उनको दिखाकर सूरत
मेरी फोटो को भी कारटून समझते हैं वे।

किसी को बिरह आकरके सताता है
कोई सौन्दर्य के ही गीत गाता है।
मगर जब देखता मैं चाँद पूनोंका
मुझे उनका रुपैया याद आता है।

श्री गोपाल प्रसाद व्यास

हास्य, व्यंग एवं विनोदमयी रचनाएँ करनेवाले गद्यकार तथा कवि

भूतपूर्व सहायक सम्पादक—
'साहित्य संदेश', आगरा।

सहायक सम्पादक—
'हिन्दुस्तान', दिल्ली।

—रचनायें—

सहायक सम्पादक—ब्रजभाषा कोश
कविता—अजी सुनो इत्यादि

वर्तमान पता—

पं० गोपाल प्रसाद व्यास
सहायक सम्पादक 'हिन्दुस्तान'
हिन्दुस्तान कार्यालय,
कनाट सरकस
नयी दिल्ली।

पत्नी को परमेश्वर मानो !

यदि ईश्वर मे विश्वास न हो,
उससे कुछ फल की आस न हो,
तो अरे, नास्तिको ! घर बैठे,
साकार ब्रह्म को पहचानो !

पत्नी को परमेश्वर मानो !

वे अन्नपूर्णा, जग – जननी,
माया हैं—उनको अपनाओ !
वे शिवा, भवानी, चंडी हैं,
कुछ भक्ति करो, कुछ भय खाओ।
सीखो पत्नी-पूजन-पद्धति,
पत्नी - अर्चन, पत्नी - चर्या,
पत्नी व्रत पालन करो और
पत्नीवत् शास्त्र पढ़े जाओ।

अब कृष्णचन्द्र के दिन बीते,
राधा के दिन बढ़ती के हैं।
यह सदी बीसवीं है भाई,
नारी के ग्रह चढ़ती के हैं।
तुम उनका छाता कोट बेग
ले पीछे-पीछे चला करो,
संध्या को उनकी शय्या पर
नियमित मच्छरदानी तानो!

पत्नी को परमेश्वर मानो!

तुम उनसे पहले उठा करो,
उठते ही चाय तयार करो।
उनके कमरे के कभी अचानक
खोला नहीं किवाड़ करो!
उनकी पसन्द से काम करो,
उनकी रुचियों को पहचानो,
तुम उनके प्यारे कुत्ते को,
बस चूमो चाटो प्यार करो!

तुम उनको नाविल पढ़ने दो
आओ घर का कुछ काम करो।
वे अगर इधर आ जायँ कहीं,
तो कहो—प्रिये, आराम करो।

उनकी भौंहें सिगनल समझो,
ये चढ़ी कहीं तो खैर नहीं,
तुम उन्हें नहीं डिस्टर्ब करो,
ऐ हटो, बजाने दो प्यानो !

पत्नी को परमेश्वर मानो !

तुम दफ्तर से आ गये, बैठिये,
उनको क्लब में जाने दो।
वे अगर देर से आती हैं,
तो मत शंका को आने दो।
तुम समझो वह हैं फूल,
कहीं मुरझा न जाँय घरमें रहकर !
तुम उन्हें हवा खा आने दो,
तुम उन्हें रोशनी पाने दो !

तुम समझो 'ऐटीकेट' सदा
उनके मित्रों से प्रेम करो।
वे कहाँ किसलिए जाती हैं—
कुछ मत पूछो, ऐ 'शेम' करो !
यदि जग में सुख से जीना है,
कुछ रस की बूँदे पीना है
तो ऐ विवाहितो ! आँख मूँद
मेरे कहने को सच मानो !

पत्नी को परमेश्वर मानो !

मित्रों से जब वह बात करें
बेहतर है तुम मत सुना करो!
तुम दूर अकेले खड़े-खड़े
बिजली के खम्भे गिना करो!
तुम उनकी किसी सहेली को
मत देखो, कभी न बात करो।
उनके पीछे उनके दराज से
कभी नहीं उत्पात करो।

तुम समझ उन्हें "स्टीमगैस"
अपने डिब्बे को जोड़ चलो।
जो छोटे स्टेशन आयें, उन
सबको पीछे छोड़ चलो!
जो सँभल कदम तुम चले चले
तो हिन्दू सद्गति पाओगे,
मरते ही हूरें घेरेंगी, तुम
चूको नहीं मुसलमानो!

पत्नी को परमेश्वर मानो!

तुम उनके फौजी शासन में,
चुपके राशन ले लिया करो।
उनके चैकों पर सही-सही
अपने दसखत कर दिया करो।

तुम समझो उन्हें "डिफेंस एक्ट"
कब पता नहीं कर क्या बैठे ?
वे भारत की सरकार नहीं,
उनसे सत्याग्रह किया करो !

छः बजने के पहले से ही
उनका करफ्यू लग जाता है ?
बस हुई जरा सी चूक कि झट
ही "आर्डिनैंस" बन जाता है !
वे 'अल्टीमेटम' दिये बिना ही
युद्ध शुरू कर देती हैं,
उनको अपनी हिटलर समझो,
चर्चिल सा डिक्टेटर जानो !

पत्नी को परमेश्वर मानो !

मैं कविता लिखना भूल गया !

आखिर हिन्दी का लेखक था, हो गयीं जरा-सी वाह-वाह !
दो-चार किताबें छपीं कि बस, गुब्बारे जैसा फूल गया !

मैं कविता लिखना..........

तुकबन्दी क्या आयी, खुद को
मैं अफलातून समझ बैठा !
अपने को ही मैं स्वयं हास्यरस
का मजमून समझ बैठा।

इस कदर हो उठा प्रगतिशील
पगहा-बन्धन सब तोड़ दिये,
मेरठ के ही स्टेशन को, मैं
देहरादून समझ बैठा !

धरती पर टिके न पैर, लपक कर आसमान में झूल गया।

मैं कविता लिखना..........

फिर क्या था बातों-बातों में
कवि कालिदास को मात किया।
खा गये सूर-तुलसी चक्कर
जब मैंने दिन को रात किया।

ओ' इस युग के कवि, अरे राम!
वह तो सब निरे अनाड़ी हैं।
कोई भी तो इक्सप्रेस नहीं,
सब के सब भैंसा गाड़ी हैं।

घबराकर लोचन मूँद गये, जब डाल आँख में धूल गया!

मैं कविता लिखना............

था अब तो मैं ही मैं केवल,
फैला केले के पत्ता सा!
चिकना बैंगन-सा गोल-मोल,
अकड़ा कुछ कुक्कुरमुत्ता सा!

आलोचक कन्नी काट गये,
सोचा भिड़ने में सार नहीं।
जो छेड़ दिया तो चिपट गया,
बन गया बर्रे का छत्ता सा!

सज्जनता से सम्बन्ध मेरा बिलकुल ही कट जड़मूल गया!

मैं कविता लिखना............

धीरै-धीरे मैंने सोचा
कविताई में कुछ सार नहीं।
इसमें न लीडरी मिलती है,
मिलती हैं इससे कार नहीं!

वक्तव्य न छपते पत्रों में, थैलियाँ न होती भेंट यहाँ!

मैं कविता लिखना…………

वह धन्धा है बेकार, कहीं
पर चन्दे का व्यापार नहीं!
जब चन्दे की लग गयी चाट
तो बन्दा कविता भूल गया!

मैं अपने में ही फूल गया, सारा आदर्श फिजूल गया!

मैं कविता लिखना भूल गया!

भैयाजी बनारसी

[मोहन लाल गुप्त]

एम. ए. (प्रयाग विश्वविद्यालय)

जन्म तिथि—ज्येष्ठ कृष्ण २, सं० १९७१ वि०

अभिरुचि

कविता, कहानी, निबंध, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य

सम्पादन:—

भूतपूर्व सम्पादक—'आज'—साप्ताहिक

'संसार' रविवार विशेषांक

'तरंग' पाक्षिक

वर्तमान संपादन—'आज'

साप्ताहिक विशेषांक

पुस्तकें:—

प्रकाशित—दो काली-काली आँखें (कहानी)

मखमली जूतो (हास्यरस कहानी)

रामझरोखा (हास्यरस कविता)

अप्रकाशित—नयी बीवियाँ, पुराने जूते

स्केच—सहयात्री (कहानी)

निवास—रामप्रसाद भवन, ८।४

खेतगंज बनारस ।

भैयाजी बनारसीके प्रति

बहुत सुना था नाम तुम्हारा अबतक था दर्शन का प्यासा,
किंतु देखकर आज तुम्हें भैयाजी सचमुच हुई निराशा।

कवि हो, पर कविसे तुम लगते नहीं यही आश्चर्य परम है,
मुखमें गाली नहीं, जेब खाली; चेहरे पर हया-शरम है।

कवि होते तो केश लटकते, कटि में एक कमानी होती,
हावभाव हिजड़ोंसे होते आँखें सुरमेदानी होतीं।

खटकिन के-से नखरे होते कविता का तुम धंधा करते,
चार गीत लिख भैयाजी कविसम्मेलन में सौदा करते।

या होते आचार्य पीठपर बैठे पान चबाते होते,
गुरुओंके बन गुरू, शिष्य गोरूसे सदा चराते होते।

लिखते सब साहित्य नशेमें, तुम्हें भाँग-बूटीसे नफरत,
गांजा चरस अफीम मदककी भी तो तुमको नहीं लगी लत।

कविता है बेमजा बीचमें प्यालेका गर दौर नहीं है,
कवि क्या जिसके दिल-कोटरमें लगा प्रेमका बौर नहीं है।

परिचय देते तुम्हें देखकर देवी सरस्वती थर्राती,
देव, बिहारी चिलमें भरते, कालिदास कहलाता नाती।

'मैं हूँ कवि सम्राट मान लो—इसमें कुछ अत्युक्ति नहीं है,
नहीं एक भी वाक्य कि जिसमें प्रेमचन्दकी सूक्ति नहीं है।'

यह सब कुछ भी नहीं अरे तुम 'भैया।' कविता करना छोड़ो,
अपनी प्रतिभा की घोड़ी को अब तुम नयी दिशा को मोड़ो।

जैसे सीधे सादे तुम, हो वैसी ही कविता भी सादी,
ऐसी कविता नहीं चलेगी, भैया जाकर बेचो खादी।

नहीं सादगी का युग भैया सचमुच बड़ा जमाना टेढ़ा,
कविता वे ही कर सकते हैं, लिए साथमें तीतर मेढ़ा।

भैयाजीकी सीख

चन्दासे बचना हो भैया कोई नयी संस्था खोलो,
जब कोई चन्दा मांगे तो पहले उसकी जेब टटोलो।

मित्रोंसे बचना चाहो तो लो उनसे मँगनी-उधार तुम,
पास नहीं फटकेगा कोई चाहे रखो खुला द्वार तुम।

पत्नीसे बचना हो तो बस अच्छे 'आर्यपुत्र' बन जाओ,
मित्रों-संग सिनेमा जावें, घरपर बच्चे बैठ खिलाओ।

गुरुओंसे बचना जो हो, तो मूँड़ो चार नये तुम चेला,
गुरुडमकी गीता बांचो, है मूर्ख वहीं जो रहे अकेला।

राजनीतिसे बचना हो, तो खोलो नया धर्मका खाता,
धर्मगुरू है अंगूठेपर, दुनियाभर को नाच नचाता।

कांग्रेससे बचना हो, तो फौरन कम्युनिस्ट बन जाओ,
कामरैडसे बचना हो तो गांधी टोपी दे तन जाओ,

नेताओंसे बचना है, तो भैया सम्पादक बन जाओ,
एक टिप्पणी लिखकर कह दो दफ्तर में आ पूंछ हिलाओ।

अगर घूससे बचना है तो बन जाओ नौकर सरकारी,
अगर भूखसे मरना है तो भैया बन जाओ अखबारी।

योजनाएं ! योजनाएं !! योजनाएं !!

नित नया सूबा, नये मंत्री, नया कर,
नित नयी स्कीम, नव पद, नये अफसर !
क्यों न भैयाजी नयी कविता बनायें !

आप बेघर हैं अगर है परेशान
तो मँगायेंगे हम लंदनसे मकान !
आप भूखे हैं जो चाहें रोटी-साग,
हम बनायें सिंदरीमें नया खाद !

आप हैं बेकार रुकिये पांच साल,
कर दिखायें देखिये क्या क्या कमाल !
सैकड़ों, लाखों, करोड़ों योजनाएं,
माँगता भोजन, हैं मिलती योजनाएं !

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा !

कठपुतली संचालित हैं नर, जापानी गुड़ियों-सी नारी,
भैयाजी दिल्लीमें कैसी भाग दौड़ की यह बीमारी ।
बस, ट्रामोंमें और सड़कों पर गूँज रहा है, एक यही स्वर,
जीवन की बस एक दैनिकी—घरसे दफ्तर, दफ्तर से घर।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा !

उदरपूर्तिके महायज्ञ की पूरक महायन्त्र सी दिल्ली,
मानव रूपी कलपुरजों से निर्मित महायन्त्र सी दिल्ली।
दौड़ रहे निष्प्राण मूर्तिवत क्षणभरको आराम नहीं है,
मानवताका नाम नहीं है, यहाँ हृदय का काम नहीं है ।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा !

दिल्ली का देवता स्वार्थ है—सभी स्वयं सेवामें है रत,
अपनी बीबी, अपने बच्चे पर चिंतन की किसको फुरसत।
सेवाका मतलब मेवा, नित नूतन साइनबोर्ड लगाते,
देशभक्तिकी हाट लगी है सभी एकके चार बनाते ।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा !

गली-गली स्कूल खुले हैं चौराहे पर कालेज कोटर,
बिना पढ़े जो पास करायें ऐसे हैं आचार्य प्रभाकर।
ट्यूशन भिक्षा, सस्ती शिक्षा, दिल्लीका प्रयोग अभिनव है,
नहीं परीक्षा का भय भैया शिक्षाका यह सुखद प्रसव है।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा!

कृषक वेष भारत का भैया कहते हैं यह हृदय देश है,
भैयाजी ने देखा तो यह पापा-मामाका प्रदेश है।
सूट-बूट टाई के अन्दर करते बन्दर गिरमिट टाटा,
भारतीय भारत के मुखपर दिल्ली एक पश्चिमी चाटा।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा।

पढ़ा किताबोंमे कि सदासे दिल्ली पर होता है हमला,
अभी नहीं टूटी परम्परा होता है हमले पर हमला।
पंजाबी लस्सी का हमला, बंगाली मच्छी का हमला,
दोसा और इडली का हमला, उत्तरपर दक्षिण का हमला।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा!

सचिवालय में चले जाइये होता तमिलनाडका है भ्रम,
मद्रासी बाबू करते अंग्रेजी में हिंदी का 'वेलकम'।
समझा भैया दिल्ली में क्यों हिंदीका विरोध होता है,
अपने घरमें चादर ताने हिंदी का प्रदेश सोता है।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा!

बड़े नाजसे पाली पण्डित नेहरू की रजधानी दिल्ली,
खूब घूम फिरकर देखा भैया तेरी दीवानी दिल्ली।
अंग्रेजोंकी परित्यक्ता सी, अंग्रेजी बन्डल दिल्ली,
भारत नहीं इंडिया की है सुन्दर नयी कैपिटल दिल्ली।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा!

सुन्दर पर निर्जीव इमारत लगती जैसे मुरदा घर है,
यह भारतका देश नहीं है-लन्दन या न्यूयार्क नगर है।
पृष्ठ पुराने फाड़ विदेशी कोई नव इतिहास लिख रहा,
बड़ा प्रगति की तुमने दिल्लीपर हमले की बात अब कहां?

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा!

अलग-अलग सब प्रांत वहाँपर—

हुआ विभाजन अभी नहीं कम,
बेचारा भारत रोता है हुआ हृदय का पोस्टमार्टम।
उत्तर,दक्षिण,पूरब,पश्चिम अलग-अलग है सबकी दिल्ली,
दिल्लीको भारती बनाओ तभी टिक सकेगी यह दिल्ली।

देखी तुम्हरी दिल्ली बाबा।

तुम भैया बतरस के प्रेमी, गप्प लड़ानेकी तुमको लत,
पर इतना अवकाश कहां है? बातोंकी है किसको फुरसत।
लगता है जैसे कोई इस दिल्ली में बेकार नहीं है,
भैयाजी दिल्लीमें रहने का तुमको अधिकार नहीं है।

हे कवयिता !

लिख चुके तुम गीत प्रेयसि के पिया के गीत
लिख चुके तुम गीत बेगम के मियांके गीत।
लिख चुके तुम प्यारके तकरारके भी गीत
लिख चुके तुम साड़ियों-सलवारके भी गीत।

•

लिख चुके तुम सालियों ससुराल के भी गीत
श्रीमतीके हार, जंपर, शालके भी गीत।
लिख चुके तुम तीज के त्योहार के सब गीत
दशहरा, दीपावली-अखबारके सब गीत।

गीत दैनिक, साप्ताहिक गीत संडेके
गीत मुर्ग़ मुसल्लमके, गीत अण्डेके।
गीत लस्सीके टमाटर सूपके भी गीत
गीत सिनेमा तारिकाके रूपके भी गीत।

गीत कालेज प्रेमियोंकी प्रीतके भी गीत
गीत प्रीति प्रशस्तिके नवनीतके भी गीत।
विरहिणीके आँसुओंकी धारके भी गीत
प्रेमियोंकी भेंटके उपहारके भी गीत।

भैया जी बनारसी

गीत यौवनके जवानीके उमड़ते गीत
गीत बुड्ढोंके लड़कपनके झगड़ते गीत ।
लिख चुके तुम विदा अभिनन्दन समर्पण गीत
लिख चुके तुम ब्याह, मूंडन, कर्णछेदन गीत।

लिख चुके तुम वन्दनाके प्रार्थनाके गीत
अब लिखो तुम मिनिस्टर अभ्यर्थनाके गीत।
अर्थहीन प्रयास हैं ये साधनाके गीत
अर्थमन्त्रीके लिखो आराधना के गीत ।

भैय्या मुझे मकान चाहिये

पड़ा हुआ हूँ जाड़े में भी,
छत के नीचे सायबान में ।
दूर कहीं जलती है बिजली
किस खुश किस्मतके मकान में ।
सरदी न्यूमोनिया न व्यापे, भगवन ऐसा शाप चाहिये ।
भैया मुझे मकान चाहिये ।

एम०एल०ए० औ मिनिस्टरों के
दरवाजों की खाक छान कर ।
पगड़ी वाले कोठीदारों से
भी आखिर हार मानकर ।
मरने को ही नहीं, और अब रहने को भी श्मशान चाहिये ।
भैया मुझे मकान चाहिये ।

होटल और धरमशाले भी,
शक्ल देखकर घबराते हैं ।
रिश्तेदार नगर के सारे,
आँखें नहीं मिला पाते हैं ।
आज लखनऊ कहता है कि मुझे नहीं मेहमान चाहिये ।
भैया मुझे मकान चाहिये ।

कोठी वाले, बंगले वाले,
सोते हैं सब टाँग पसारे ।
यहाँ ठिठुर कर रात काटते
गिन गिरजा के घन्टे, तारे ।

आसमान के नीचे सर पर मुझको एक वितान चाहिये ।
भैया मुझे मकान चाहिये !

घर के लिए हजारों बातें,
बड़ों-बड़ों की बात सही है—
अगर नहीं मिल सकता है तो,
अंतिम एक उपाय यही है—

भैया इसी लखनऊ में अब, मुझको कन्यादान चाहिये ।
भैया मुझे मकान चाहिये ।

अपनी कविताके आलोचकके प्रति

यह तो तुम मानोगे ही है गोबर और बुद्धिमें अंतर,
समझ सकोगे तब तुम मेरी कविता, आलोचकमें अंतर।

काकचंचुसे पाते हो तुम मेरे गीतोंका गंगाजल,
बुद्धि विकार दूर हो, मनकी काई फटे, हृदय हो निर्मल।

नाप रहे जिस थर्मामीटरसे मेरी कविता का तुम बल।
नपना है बेकार तुम्हारा भैया यह प्रतिभाका दंगल।

तुम गड़ही के गायक दर्दुर, टेर पुरानी, रटे हुए स्वर,
कविता मेरी मलयवायु सी जैसे नया पहाड़ी निर्झर।

कविता श्वेत कमल है, उसपर काकबीट यह गंदा मैला,
आलोचककी डींठ—अरे हागता कोई बैठा गाबरैला।

कविता मन विज्ञान नहीं है, नहीं ज्ञान अज्ञेय पनारा,
मानव उरका महोच्छ्वास है, मुक्तहासकी है रसधारा।

कवितामें तुम ढूढ़ रहे हो स्वादवादका कोकाकोला,
क्या समझोगे कविता छोड़ो, बेचो जाकर आलू-छोला।

एक छात्रकी नोटबुकपर

रैस्ट्रांमें कल किसी छात्र की एक नोटबुक हाथ लग गयी,
लगा उलटने पन्ने, जागी स्मृतियां औ नींद भग गयी।

प्रथम पृष्ठपर सहछात्राओंकी नामावलि और पता था,
कौन कहाँ रहती है इसकी भी खोज खबर रखता था।

बायरन, शेली, कीट्स 'कोट'[1] थे, 'बिउटी'[2] का वह परम भक्त था,
और पन्तका 'जघनोंके मानिकसर'का सौन्दर्य व्यक्त था।

ब्लाउजके गवाक्ष 'कट आउट' से गोरा तन यौवन झांका,
तुरत चरित नायकजीने दिलके पन्ने पर अनुभव टांका।

एक पृष्ठपर कवियों और शायरोंका अद्भुत सम्मिश्रण,
सार शायरी कविताका केवल यौवन-चुंबन-आलिंगन।

कविताके नूतन प्रयोग थे, बेतुक थे कुछ, कहीं छन्द था,
कक्षाकी अज्ञात यौवनाओंका नखशिख रूप बन्द था।

कालिदासकी मधुर कल्पना, मिर्जा गालिबके टुकड़े थे,
चित्रकलामें भी अभिरुचि थी कटि औ कुचके रूप खड़े थे।

१—उल्लेख, २—सौंदर्य।

पालिटिक्स[1] थी, फिलासफी[2] थी और साथ ही मार्क्सवाद था,
सोशलिज्म[3], भूदान, नेहरूवाद— मिला सबका सवाद था।

प्रीतिकालके मधुर गीत थे, रीतिकालके सुघर सवैया,
कहीं 'हाय मधुबाला' का स्वर, कहीं चीख थी 'आह सुरैया'।

एक पृष्ठ 'एनगेजमेंट'[4] का, सुबह-शामका आना जाना,
मेटिनीका प्रोग्राम कहीं तो, लता, तलतका कहीं तराना।

प्रोफेसरकी मूँछोंपर, लड़कीकी चोलीपर 'रिमार्क'[5] था,
होटल का हिसाब, रैस्ट्रां बिल, कहीं पान का पीक मार्क था।

मिला अंत में सूक्ति वाक्य यह उलट चुके जब सारा पन्ना,
'क्या बैठे झख मार रहे हो चलो पार्टनर[6] चूसें गन्ना'।

भैयाजी हैं व्यर्थ नोटबुक लेखकके मनका विश्लेषण,
सर्वोपरि है, सर्वश्रेष्ठ है कामशास्त्र बस करो अध्ययन।

१—राजनीति, २—दर्शन, ३—समाजवाद, ४—अगला कार्यक्रम, ५—टिप्पणी, ६—साथी।

टेर रही पिया तुम कहाँ ?

(पैरोडी)

खिड़की के पास झुकी इमली की डार रे !
डारविनके पोतोंका उसपर अधिकार रे !
बाथ रूमसे रही मैं कबसे पुकार रे !
बन्दर ले गया मुआ मेरी सलवार रे !

इमलीके चियां तुम कहाँ ?
टेर रही पियाँ तुग कहाँ ?

सार्जिदे कविताके जुटा रहे साज रे !
जोड़ रहे तुक जैसे काबुलीका ब्याज रे !
मरने पर तेरे ओ मेरी मुमताज रे !
बनवाऊँ काशीमें एक नया ताज रे !

कहके गये पियाँ तुम कहाँ ?
टेर रही पियाँ तुम कहाँ ?

'एरियल'के खम्भेपर कौएकी पाँत रे!
कांव-कांव नहीं, गीतकी है बरसात रे!'
रेडियो कवि-सम्मेलन कविकी जमात रे।
प्रेमसे खिलाओ भैया इन्हें दूध भात रे!

सुनो 'कियाँ कियाँ' तुम कहाँ?
टेर रही पियाँ तुम कहाँ?

चायकी तो प्याली है—हींगकी बघार रे!
लोकगीत, शोकगीत, फिल्मकी डकार रे!
उमड़ चले गीत, टूटी तुककी पतवार रे!
डूब गयी कागजकी कविता मझधार रे!

लेते झपकियाँ तुम कहाँ?
टेर रही पियाँ तुम कहाँ?

नयी कविता

(समीक्षा)

केंचुएकी टांग हैं या मुर्गियोंकी बांग,
रंडियोंकी मांग के सिन्दूरका सा स्वांग।
पागलोंका ज्ञान है या दार्शनिक अज्ञान,
रेडका उद्यान है या खेलका मैदान।

ऊँटकी है बलबलाहट गर्दभोंका नाद,
नींदकी है बौखलाहट, स्वप्न का संवाद।
हृदय की खुजली नहीं मस्तिष्क का है दाद,
कविताका सैम्पुल नया 'मेड इन इलाहाबाद'।

प्रसव-पीड़ासे दुखी हैं काव्यके ये बांझ,
बजे बारह दोपहरके—उतर आई सांझ।
रैस्टरी साहित्य है या चायका संगीत,
आरकेष्ट्रा भोपुओंका, कुकुरमुत्ता गीत।

यह नशेका ज्ञान है, बेहोशका है होश,
दौरका यह 'और' है या पेंसिलिनका जोश।
समझमें आये न उसकी समझका है दोष,
खोपड़ी मे खाद डालो काव्य है निर्दोष।

•

पीत ज्वर है, शीत ज्वर है या कि कालाजार?
हो गया सरसाम लो साहित्य है बीमार,
डाक्टरी बेकार सारी मत करो तुम शोर,
नई कविता रंगका बस एक 'नेचर क्योर'?

पैरोडीकी पैरोडी है काव्यका क्या काम,
नामकी कविता, हो चरचा, बस यही ईनाम।
नाम होगा चाहे तुम कितना करो बदनाम,
खुल गई है फैक्टरी औ घट गया है दाम।

चारपाईपर लिखी है सिर्फ लाइन चार,
ले उड़े कुछ दोस्त उसको हवामें बेतार।
सुना है भैयाजी तुम हो आजकल बेकार,
नयी कविताका ले चूरन करो परचार।

बाबा विश्वनाथके दरबारमें एक हरिजनकी अर्जी

विश्वनाथ, दुनियांके मालिक तेरा यह दरबार
दर्शनको है खड़ा तरसता कबसे एक चमार ।
दरवाजेपर सींग दिखाते नन्दीके अवतार
बांट रहे सिनेमाघर जैसा दर्शनका अधिकार ।

तुम हो भंग-समाधि लगाये कबसे भोलेनाथ
पटक रहा हूँ ड्योढ़ीपर मैं कबसे अपना माथ ।
महादेव मानवके बंदी, रक्षक प्रहरी कौन
यह कैसा अन्याय देव ! तुम अरे अभीतक मौन !

बिना कहे करते फिरते हो तुम जग का कल्याण
किन्तु द्वारपर इस भिक्षुक को मांगे मिला न दान ।
होता तब त्रिशूलका अब हरिजनके लिए प्रयोग
और उधर आंखे मूँदे तुम साध रहे हो योग ।

सब पापोंके जनक कामको किया तुरत ही क्षार
सबसे पापी जीव सृष्टिमें केवल एक चमार ?
जटा-जूटमें गंगाकी बहती है निर्मल धार
फिर भी महादेव डरते—छू देगा एक चमार !

विषधरकी माला लपटाये, बना गलेका हार
चरणोंका स्पर्श नहीं पा सकता एक चमार।
घोट गये विषकलश खेलती रही अधर मुस्कान।
बतलाओ हे नीलकंठ! क्यों हरिजनका अपमान।

कैसे शिव, कैसी गंगा और कैसा हिम कैलाश
आ सकता है नहीं भक्त हरिजन चरणोंके पास।
एक क्षुद्रकी छाया पड़ते ही हे महा-महान
मुक्त जैसे ही हो जाओगे—यह आश्चर्य महान।

तुम शिवसे यदि अशिव हो गये तो मुझको धिक्कार
नहीं चाहिये महादेव अब दर्शनका अधिकार।
बाट जोहता हूँ प्रलयंकर, बढ़े पापका भार
जटा जूटसे गंगा उमड़े हो निर्मल संसार।

तुम रो दो मेरा गान अमर हो जाये।

मेरा हृदय बड़ा उच्छृंखल—
उछल-उछल रह जाये।
दोनों हाथ दबाकर इसको
मैंने छंद बनाये।

किन्तु रेडियो सम्मेलनमें
मैं जाकर पढ़ आया—

तुम छू दो, मेरा कान अमर हो जाये!

जब जब पास तुम्हारे आया
तुमने है लौटाया।
मुझको बस निराश करने में
मजा तुम्हें है आया!

प्रणय गीत है-क्या समझोगे?
फिर भी हे सम्पादक!

तुम ले लो, मेरा नाम अमर हो जाये!

जिसके आगे कर फैलाया,
उसने पैर बढ़ाया।
'मिस' के सम्मुख सीस झुकाया
उसने बूट लगाया।

ठोकर खाकर मैं घर आया
—थका हुआ बिस्तर पर।
विष दे दो, मेरा प्राण अमर हो जाये!

सुन्दर जगत असुन्दर मैं हूँ,
मैंने किसे न चाहा!
इस विशाल जग में पर केवल
मैं ही हूँ अनब्याहा!

देखें कौन उलझती है
मेरी जीवन - झाड़ीमें!
तुम रख दो मेरा नाम अमर हो जाये।

सबने अपना घर भर डाला,
मैं ही हूँ बस खाली!
किसी कोमलांगीके उर में
मैंने नींव न डाली।

हृदय हथेली पर ले चलता
मैं हूँ बिड़ला दानी।
तुम लेलो मेरा दान अमर हो जाये!

सब हँसते हैं सुन-सुन कवि की
दुखसे भरी कहानी!
प्रेयसिकी कानी आँखोंमें
एक बूँद है पानी!
इतने ही में पार लगेगी
जीवनकी नौका यह—
तुम रो दो मेरा गान अमर हो जाये।

जाड़ा आया

सिहर उठा अफ़गान हिमानी स्नो से सुन्दरियों का आनन
बन्द हुआ अब बाथ रूम में तानसेन का गायन-नर्तन
गंगाजल के दर्शन से ही रोमांचित हो उठता है तन
सिल्क-साड़ियों औ सूटों में काँप-काँप उठती है काया
जाड़ा आया !

सूट-शेरवानी में देखो निकल पड़े होस्टल के राजे
कोमलांगियों के तन पर भी रंग-बिरंगे कोट विराजे
शाम हुई तो बन्द होगये होस्टल के खिड़की दरवाजे
घुसे घोसलों में उलूक औ' सड़कों पर सूनापन छाया
जाड़ा आया !

अब न मिलेगी किसी सुन्दरी के घर आइसक्रीम की दावत
आइसक्रीम बन गया पानी शेविंग भी हो गई मुसीबत
भैय्या जी लो डाल पेप्स की टिकिया चुभलाने की आदत
बालाओं ने ऊन बाल से अपने मन को है बहलाया
जाड़ा आया !

अब न सुनहरी संध्या होगी अब न प्यार की होंगी रातें
अब न रात को वाकिंग होगी अब न प्यार की होंगी बातें
नाइट शो, चाँदनी रात की बोटिंग, गीतों की बरसातें
भैया जी के मन के आँगन में कुहरे का बादल छाया
जाड़ा आया !

शाम हुई, बदली हो आयी, हवा चली तो काँप उठा तन
खून जम गया, हड्डी काँपी, बन्द हो गयी दिल की धड़कन
सम्पादक जी तुम भी छापो लेकर 'लिपटन' का विज्ञापन
भैया के काले कम्बल में जाड़े का बुखार घुस आया
जाड़ा आया !

गजल-गीत

उम्र घटती जा रही है, हुस्न बढ़ता जा रहा है।
आसमाँपर हुस्न का यह चाँद बढ़ता जा रहा है।
चाँदसे चेहरे पर कितनी खूबसूरत झुर्रियाँ,
हुस्नकी दरियामें ज्यों शैतान बढ़ता आ रहा है।
यह जवानीका चमन है और पतझर का समाँ,
फिर नये पत्ते, नया अंकुर उभड़ता आ रहा है।
हुस्नकी भी जिन्दगीकी हर अदा तसवीर है,
दिल मुसाविर खींचता और हुस्न बढ़ता जा रहा है।
दिलमें तूफाने समन्दर, आँखोंमें पीनेकी प्यास
जिन्दगी भी एक नशा है दौर बढ़ता जा रहा है।
ढली दुनियाँकी जवानी, हुस्न की हो आयी शाम,
पर तेरी तसवीर पर रंग नया चढ़ता जा रहा है।
तू जवाँ है जबतक मेरे दिलमें है अरमाँ जवाँ,
तू हसीं है जबतक दिल पहलू में तड़पता जा रहा है।
दिलकी इन गहराइयोंमें कौन उतरैगा जनाब,
नाज भी तो हुस्नका साया पकड़ता आ रहा है।
प्यारकी मंजिल नयी औ हुस्नकी अन्दाज उफ!
दिलसे पूछो क्यों तुम्हारा प्यार बढ़ता जा रहा है।
शैंपेनकी घूँट-सी मीठी तुम्हारी वर्षगांठ,
कहने दो दुनियाकी 'भैयाजी' बिगड़ता जा रहा है।

बेढब बनारसी

[कृष्णदेव प्रसाद गौड़]

एम० ए० (राजनीति, अंग्रेजी) एल० टी०

जन्म—कार्तिक शुक्ल ११, संवत् १९५२ वि०

आलोचक, हास्यरस के कवि, कहानीकार, निबंधकार, उपन्यासकार, शिक्षा-शास्त्री एवं पत्रकार।

भूतपूर्व सम्पादक—तरंग, आँधी, भूत, भाँड़, करेला, खुदा की राहपर।
वर्तमान सम्पादक—'प्रसाद' काशी
भूतपूर्व प्रधान मंत्री—नागरी प्रचारिणी सभा काशी।
अध्यक्ष—उत्तर प्रदेशीय हिंदी साहित्य सम्मेलन।
भूतपूर्व अध्यक्ष—साहित्य-परिषद हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
पुस्तकें—बेढब की बहक (कविता) मसूरीवाली, बनारसी एक्का, टनाटन, गाँधीजी का भूत (कहानियाँ), महत्व के गुमनाम पत्र (पत्र) उपहार (निबंध), लिफ्टनेन्ट पिगसन की डायरी (उपन्यास) तथा अनेकानेक वैधानिक पुस्तकें।

वर्तमान पद—(आचार्य) दयानन्द इन्टर कालेज, काशी।

वर्तमान पता—६४/२०९ बड़ी पियरी, बनारस।

चाँदनी रात

सरदी हलकी पड़ रही
ढकी ओस से है मही
मक्खन की सरिता बही
अथवा फैला है दही
अजब चाँदनी रात है
मानो बरसा भात है

रुई का संसार है
या गंगा की धार है
हिम का पारावार है
चीनी का विस्तार है
फैला कुमुद प्रसून है
या यह छिड़का नून है।

धवलागिरि है सो गया
कोई मोती बो गया
अंधकार है खो गया
जग चूने से धो गया
धरती का शृंगार है
पोता क्रीम अपार है।

घड़ा सुधा का फूट कर
कीर्ति किसी की लूटकर
ताल मखाना कूटकर
तारों का दल टूटकर
धरती पर बिखरा पड़ा
हास्य राज्य है आ खड़ा

युग का नया विहान है
या खद्दर का थान है
अंग्रेजों का यान है
जो करता प्रस्थान है
परछाईं है घामकी
ठंढाई बादामकी ।

मेढक तू कितना महान है

उस कवि ने तुझको बतलाया वेद पाठियों ऐसा
जिसने महिमा रामनाम की हम सबको बतलाई
जिसने लक्ष्मण के हाथों अबला की नाक कटाई
कैसा तेरा मधुर गान है।

मघवा की बरछीसे बादल पर प्रहार जब होता
सिसक सिसक कर नभमण्डलमें घन शावक जब रोता
नेताओं सा सदा उन्हें तू धीरज देता रहता
तू पंडित है, ज्ञानवान है।

तेरा है संगीत प्रेम का उर व्याकुल कर देता
तेरा स्वर कवियों के कलमों में स्याही भर देता
देख उछलते तुम्हें उछलने लगते प्रेमी जन भी
तू तो सचमुच शक्तिवान है।

जिसने लिखा न तुझपर कविता वहभी कोई कवि है
बिना अर्थका भारवि है वह बिना ताप का रवि है
महाकाव्य क्या और गीत क्या मेढक पर न लिखा जब
मंगल तेरा ही बखान है।

पानी में बैठा रहता निसिवासर घोर तपस्वी
दिग दिगन्त में गूँजा करती बाणी महायशस्वी
तू संदेश जागरण का देता रहता है सबकी
जीवन का तू ही प्रमाण है

जलचर जनता का तू कवि है, नमस्कार है तुझको
जन कवि की जानब से ले यह पुरस्कार है तुझको
सुने या नहीं निज तू सबको सदा सुनाता
मेढक तेरी तरुण तान है

रिमझिम रिमझिम बरस रहा हो पानी नीलगगनमें
किसी सुधाकर की स्मृति हो बैठा युवक लगन से
तेरी बोली मीठी टीसों को उर में ला देती
लाता उर में तू उफान है।

गंजी खोपड़ी

खोपड़ी गंजी मनोहर चीज है
है लोहारों की निहाई की तरह
है नहीं रेखा न उसमें क्रीज[1] है
सेफ[2] में जिनके बहुत कुछ होर्ड[3] है
यह उन्हीं का साफ साइन बोर्ड है ।१।

जो गली में ज्ञान के हैं मुड़ गये
घोटते हैं पुस्तकों को जो सदा
बाल उनकी खोपड़ी से उड़ गये
लोग कहते हैं बहुत विद्वान हैं
खोपड़ी पर बाल का न निशान है ।२।

एक टापू है बिना यह पेड़ का
रंग है इस ढंग का कुछ हो गया
बाल मानो मुड़ गया है भेड़ का
अमित आभा चिकनई बादाम है ।
वारनिशमय टीक-टेबुल-टाप[4] है ।३।

१–सिकुड़न । २–तिजोरी । ३–एकत्र । ४–एक प्रकार की लकड़ी की मेज का ऊपरी भाग ।

हाथ अपने आप जाता है उधर
खींचता जिस भाँति चुम्बक जोर से
आगया लोहा निकट उसके अगर
बैठ जाता हाथ तब तत्काल है
जिस तरह सम पर ध्रुपद का ताल है ।४।

इस तरह यह है चमकती खोपड़ी
देख सकते आप अपना रूप हैं
चाँद पर चाँदनी मानों पड़ी
आइना इसको लगे हैं मानने
है बनाया हाथ से भगवान ने ।५।

बाल इनका कौन बाँका कर सके
धर-पकड़ में भी न आ सकते कभी
और चुंदी कौन बढ़ब धर सके
यह बड़प्पन की निशानी है यहाँ
विश्व के सब पंडितों में है महा ।६

शिशिर

हे हरि हरो उरकी पीर।

बेध देता है हृदय को शीतयुक्त समीर,
पड़ रही है ठंढ ऐसी नीर भी है तीर।

शुद्ध मुँह करना बड़ी है प्रातः टेढी खीर,
है नहाना अग्निसागर पार करना चीर।

हो गया कालेज समय वह हो गयी गंभीर,
पर नहीं इसकी हुई मुझ पर तनिक तासीर

मैं रजाई में पड़ा हूँ धरे उर में धीर,
जिस तरह भगवान लेटे मध्य सागर क्षीर।

जीवन का मोल

यही है इस जीवन का मोल
अंग्रेजी, लाजिक, हिस्ट्री कितने सालों तक घोखा,
पास एम० ए० कर रंग बनाया अपना सबसे चोखा।
मिली सिफारिश मुझे न कोई, बड़ा नहीं बन पाया,
झुक झुक कर सलाम करना कालेज ने नहीं सिखाया।

कोई रिश्तेदार नहीं पबलिक सरविस कमिशन में,
मेरी गणना भी न हो सकी किसी भाँति हरिजन में।
लेखक बनना अधिक सरल था, मैं लेखक बन बैठा,
समझा रोब रहेगा मेरा और रहूँगा ऐंठा।

पुरस्कार के लिए लेख जब भेजा सम्पादक को,
उत्तर आया टिकट भेजकर वापस तुम लौटालो।
अब तो बस कविता करता हूँ खूब हृदय झकझोर,
शब्द मिले या नहीं, खींच लेता हूँ तोड़ मरोड़।
नयन काँटों पर दिल को तोल।

भैरवी

मैंने सुबह नहाना चाहा।

कंपन का घन घिरकर छाया,
सरदी के भय से घबराया।

भाग जाय जिससे कुछ सरदी

मैंने गाना गाना चाहा,
मैंने सुबह नहाना चाहा।

हिम्मत तनिक न मुझमें आयी,
मैंने एक भैरवी गायी।

लाने को गरमाहट थोड़ी

मैंने तेल लगाना चाहा,
मैंने सुबह नहाना चाहा।

जब पानी ने बाण चलाये,
पुरखे कई याद तब आये।

बड़े भोर यह सब क्यों प्रियतम

केवल तुम तक आना चाहा,
मैंने सुबह नहाना चाहा।

कवि

तुम प्रिये, घर-बार देखो।

मैं बड़ा अब हो गया हूँ, काव्य मैं लिखता नया हू,
पास मेरे ढेर से सम्मेलनों के तार देखो

कौन भोजन अब यहाँ है दाल रोटी भी कहाँ है।
टोस्ट, बिसकुट, चाय का प्रेयसि वहाँ भंडार देखो।

ठाठ से कविता पढ़ूँ मैं, ख्याति के रथ पर चढ़ूँ मैं,
तुम प्रबन्ध करो सभी घर का प्रिये, परिवार देखो।

पूछ कितनी है हमारी, मति न समझेगी तुम्हारी
लोग कहते हैं मुझे क्या, तुम तनिक अखबार देखो।

तुम पढ़ो कविता हमारी, आँख खुल जाये तुम्हारी,
हूँ अलग सबसे, हमारा है अलग संसार देखो।

हार

१

मानता हूँ हार।
कहाँ छकड़ा मन्दगति का कहाँ मोटरकार।
आप नभ में मैं धरा पर, किस तरह हो भेंट।
बंक के हैं आप स्वामी यहाँ खाली टेंट।

२

आपने 'फर' कोट के ऊपर लिया है रोष,
है यहाँ धोती पुरानी और है कंटोप।
आपके तिरछे नयन अंगूर जलसे चूर,
यहाँ सपने में नहीं देखा कभी अंगूर।

३

आपका जलजात सा है स्निग्ध कोमल गात
शुष्क अरहर दाल मुझको कर रही है मात।
आपकी छाया बनी है चांदनी का रूप,
और मैं दिन में बना हूँ अंधकार स्वरूप।

जीवन में कुछ कर न सका

देखा था उनको गाड़ी में
कुछ नीली नीली साड़ी में
वह स्टेशन पर उतर गयीं
मैं उन पर थोड़ा मर न सका!

महिलाओं की थी भीड़ बड़ी
गगरा-गगरी थी लिये खड़ी
घंटों मैं कल पर खड़ा रहा
फिर भी पानी मैं भर न सका।

सिनेमा तक उनका साथ किया
मैंने उनका भी टिकट लिया
भागीं मेरा भी टिकट लिये
मैं जा सिनेमा भीतर न सका।

वह गोरी थीं, मैं काला था,
लेकिन उन पर मतवाला था
मैं रोज रगड़ता साबुन—
पर, चेहरे का रंग निखर न सका।

अंग्रेजी ड्रेस[1] उनको भाया
इसलिये सूट भी सिलवाया
सब पहन लिया मैंने लेकिन
नेकटाई-नाट[2] सँवार न सका।

सीधे रण में बढ़ सकता हूँ
फांसी पर मैं चढ़ सकता हूँ
पर बेढब तिरछी चितवन के
सम्मुख यह हृदय ठहर न सका।

१—पहनावा। २—गाँठ।

आज प्रिये क्यों मुस्काती हो

ऐसी मृदुल हँसी छायी है
उषा जिसकी परछाईं है
क्या है, आज हास्यमय नयनों की रस-प्याली छलकाती हो
पत्र बुलाने को क्या माँ का
या फ्री पास किसी सिनेमा का
पास तुम्हारे आया है पर, मुझे नहीं तुम बतलाती हो
किसी पत्र में चित्र छपा क्या
जंपर कोई नया—नया क्या
हो प्रसन्न, भोजन कर जैसे ब्राह्मण भूखा देहाती हो
बनवाना है गहना कोई
मनवाना है कहना कोई
सरल हँसी अधरों में भर कर क्यों अधरों को ललचाती हो
सभा नेत्री चुनी गई हो
क्रास-वर्ड[1] में प्रथम हुई हो
बोलो हम भी करें पान रस जिसकी सरिता छलकाती हो
आज प्रिये क्यों मुस्काती हो

१—वर्ग पहेली।

आह वेदना मिली विदाई

निज शरीर की ठठरी लेकर
उपहारों की गठरी लेकर
पहुँचा जब मैं द्वार तुम्हारे
सपनों की सुषमा उर धारे

मिले तुम्हारे पूज्य पिता जी, मुझको कसकर डाँट बतायी

प्राची में उषा मुस्कायी
तुमसे मिलने की सुधि आयी
निकला घर से मैं मस्ताना
मिला राह में नाई काना

पड़ा पाँव के नीचे केला, बची टूटते आज कलाई

चला तुम्हारे घर से जैसे
मिले राह में मुझको भैंसे
किया आक्रमण सबने सत्वर
जैसे रूसी, फिन[1] लोगों पर

गिरा गटर में प्रिये आज जीवन पर अपने थी बन आयी

१—फिनलैंड के निवासी।

अब तो दया करो कुछ बाले
नहीं सँभलता हृदय सँभाले
मन में पीड़ा तन में पीड़ा
सबके सम्मुख आती कीड़ा
'लव'[1] का मलहम शीघ्र लगाओ कुछ तो समझो पीर-परायी

तंदूर से

दूर रहिये बाज आया आपके इस नूर से,
रख के दाढ़ी बन गये हैं आप तो लंगूर से
आप दाढ़ी पर फिदा, हैं लोग मुड़वाते मूँछ,
साफ चेहरा करके बन जाते हैं अब वह हूर से।
जानता हूँ आप भारत के बड़े हो मित्र हैं,
आपसे डरता हूँ मिलिये आप मुझसे दूर से।
बात कुछ सुनते नहीं, डर है न गिर जाये कहीं,
लड़खड़ाते जा रहे हैं, वह नशे में चूर से।
जब से वह नेता हुए चेहरा है फूला इस तरह,
रोटियाँ निकली हों ताजी जिस तरह तंदूर से।

१—प्रेम।

आधुनिक कृष्ण से

१

मुरली को राधिका के कर में सपुर्द कर,
हाथ में हवाना का सिगार एक लीजिये ।
दूध दही माखन को करके सलाम आप,
प्रातःकाल चाय रात काकटेल पीजिये ।
मुरली और राधिका को शीघ्र ही डिवोर्स[१] कर,
सिनेमा स्टार संग ले के रास कीजिये ।
माथलैन[२] लेके नाथ उड़िये उसी पर,
है गरुड़ पुराना उसे गोली मार दीजिये ।

२

रास रंग गोपी संग भूल जाते सारा तुम,
होती बेकारी और होता यदि टाला तुम्हें ।
छूट जाती चोरी सब दही-छाछ-माखन की,
यू० पी० की पुलिस से पड़ता जो पाला तुम्हें ।
देखते उठाना गोबरधन तुम्हारा हम,
मिलता जो खाने को घी भी घासवाला तुम्हें ।
गोकुल को छोड़ आज मथुरा को जाते यदि,
तुरत तलाक दे देती ब्रजबाला तुम्हें ।

१—तलाक़ । २—एक प्रकार का हवाई जहाज़ ।

मैं

काशी अविनाशी का अदना निवासी एक
कृष्णदेव नाम मगर रंग नहीं काला है
सेवक सरस्वती का दास दयानन्द का हूँ
टीचरी में निकला दिमाग का दिवाला है

काव्य लिखता हूँ नहीं हँसने की चीज निरा
रचना में व्यंग औ विनोद का मसाला है
पावन प्रसाद "दीन" जी का मिला 'बेढब' है
सूर हूँ न तुलसी पन्थ मेरा निराला है।

रमई काका

[श्री चन्द्रभूषण त्रिवेदी]

जन्मस्थानः—रावतपुर, उन्नाव ।

कवि, पत्रकार तथा लेखक

वर्तमानपद—कन्ट्रोलर,
आल इण्डिया रेडियो लखनऊ ।

प्रकाशित पुस्तकें:—बौछार, भिनसार
(कविता) रतौंधी (नाटक) नेताजी
(आल्हा छन्द में) धरती हमारि (प्रेस में)

वर्तमान पताः—
श्री चन्द्रभूषण त्रिवेदी
ग्राम साहित्य मंदिर, ३६ मकबूलगंज, लखनऊ ।

प्रस्तुत कवितायें "बौछार"
नामक पुस्तक से
ली गयी हैं।

कचेहरी

हम कालिह कचेहरी देखि लीन।

यह छँगुवा कै महतारी जब, लरिकउना क्यार बियाहु किहिसि।
महँगू बजाज के दरवाजे, तब हाथ जोरि अरदास किहिसि॥
तुम हमरे बेउहर हौ पुरानि, अबती तौ लाज बचाय लेव।
रुपिया पचास कै मदति करौ, हमते कागदु लिखवाय लेव॥
वह अपने घर कै पोढ़ि मोटि, मजबूत गहन औ गुरियाते।
महँगू रुपिया दे दिहिनि तुरत, सन्दूक धरी इक ओरियाते॥
फिरि संकर दुबे बोलायेगे, उइ पाग उतारैनि माथे ते।
जिन बड़े बड़ेन का खेलि लीन, बसि अपने बायें हाथेते॥
मसहूर मुकदिमाबाजा मा, जी साँपु बनावैं लत्ताते।
मनमाना सहतु निकारि लेयँ, ई बरैयन के छत्ताते॥
उनते कागदु लिखवावा गा, मनमाने आँक धराय लिहिनि।
जब आवा कामु गवाही का तब हमका तुरत बोलाय लिहिन॥
हम खुस होइ छाप लगावे का, स्याही ते अँगुठा घेपि लीन॥
हम कालिह कचेहरी देखि लीन

रुपिया पचास के ढाई सौ, कागद मा आँक धरायेगे।
वहि देबेते इनकार कीन, दुइ चारि तगादा आयेगे॥
तब संकर दुबे उनावैगे, उइ दावा किहिन कचेहरी माँ।
छँगुवा की दीदी हालु सुना, सिरु दइ दइ मारै डेहरी माँ॥
जब सम्मन आये लिहिनि दोऊ, छँगुवा औ छँगुवा कै दीदी।
घुसि आये हमरिउ चौपारी, चपरास लगाये बकरीदी॥
हैं उइ सरकारी छड़ी छुये, बइठे का ख्वारा डारि दीन।
फिरि राब निकारा बीजर कै, औ सरबतु ख्वारा घोरि लीन॥
बकरीदी मँजलि के प्यासे, पानी कै घुन्डी खोलि लिहीनि।
सम्मनु हमका दइ दिहे बादि, लोटिया दुइ चारि ढकोलि लिहिनि॥
तब तौ उइ दिसा सिधारे हैं, घएटा घएटा माँ तीन तीन।
हम कालिह कचेहरी देखि लीन।

फिरि जउने दिन तारीख परी, हम फँगिया ताखी डाटि लीन।
लइ पइसा महँगू दादा ते, टिकस कटाय कै बाँधि लीन॥
जब आई रेल बरेली ते, पहिले घुसि गयेन जनाना मा।
जब सबैं मेहरिया भकुरि उठीं, हम भागेन दुसरे खाना मा॥
यह याक टेम के गाड़ी है, खिरकिन माँ हिलगे बड़े बड़े।
पाइसे-ताइसे घुसि गयेन मुला, हमहूँ का बीता खड़े खड़े॥

मुड्डुवा पर्नाहिन ते याकन का, हम पाँव पिसउघा कइ डारा।
जब रेल ठाढ़ि भै भ्वाँका ते, मूड़ी उनहिन पर दइ मारा॥
तब तौ उइ नथुना लालि किहिनि, औ जिरजिराय गरियाय चले।
हम वइसी ते मुँह फेरि लीन, कुछ जन उनका समझाय चले॥
मुल थूका जबै तमाखू हम, फिरि उड़ि कै उन पर पीक परी।
तब तौ सब डेब्बा भनभनान, हम गारी पावा खरी खरी॥
ना चढ़व वरेली गाड़ी मा, हम कान पकरि उठि बैठि लीन।

हम कालिह कचेहरी देखि लीन।

संकर काका के साथ-साथ, हम घर वकील के पहुँचि गयेन।
उइ हमका पाठु पढ़ाय चले, हम भिटिकि मूड़ अस कहत भयेन॥
वह ढाई सै का करजु लेय, यतरी वहिकै अउकाति कहाँ।
साहेब तुम तनिकु बिचार करौ, छेरी[1] मुँह कुम्हड़ा जात कहाँ॥
महँगू दादै यहु हालु दीख, तब किहिनि चिरउरीं बार बार।
बरफी लइ आये पउवा भरि, तब तौ खुस होइगा जिउ हमार।
हम कहा न यहिमा झूठि बात, वहिं लीन अढ़ाई सै इनते।
मुसक्याय दिहिन वकिलऊ तबै, औ होइगे बहुत खुसी हमते॥
फिरि चलेन ताव दै म्वाछन पर, औ गयेन कचेहरी पैठि तबै।

१—बकरी।

जहँ आपन आपन तखत धरे, गंगावासी असि बइठि सबै ॥
फँसि गयेन हुवैं खिल्लामी मा, वहिं हमते रुपिया ऐंठ लीन ॥
हम काल्हि कचेहरी देखि लीन ।

हम हरि भजनन का गये रही, बाटै का मिली कपासु मुला।
खिल्लामी वालेन लूटि लीन चसमा मा रुपिया एकु घुला ॥
पउवा भरि बरफी हाथ लागि औ स्वारा आना डारि दीन।
जेतने कै कीन्ही भगति नहीं, वतने कै खँभरी फारि लीन ॥
घिघियान जोर ते चपरासी, तब हाजिर भयेन कचेहरी मा ॥
गिरि परेन वकीलऊ के ऊपर, जब पाँव लागि गा डेहरी मा ॥
फिरि चपरासी के कहिब पर, गंगा कै किरिया खाय लीन।
तबतौ वकील कै चाढ़ बाजी, उन डिगरी तुरत लिखाय लीन ॥
पर जबहीं चलेन कचेहरी ते, चपरासी दहिने किहिसि छींक।
वह बसुधा ईमानी कै, ना कोहूँ बैपरी[1] ठीक-ठीक ॥
संकर काका कै आँखि फूटि, महँगू का लरिका जात रहा।
बरखा मा म्वारौ घरु गिरिगा, मैं सालन तक तक पछितात रहा।
कब कहिका भला कुधानि फली, हम बड़े-बड़ेन का देखि लीन।
हम काल्हि कचेहरी देखि लीन।

१—उपभोग।

बुढ़ऊ का बियाहु

बात ना हमते जात कही ॥

जब पचपन के घरघाट[1] भयेन,
तब देखुआ आये बड़े - बड़े ।
हम सादी ते इनकार कीन,
सबका लउटारा खड़े - खड़े ॥

संपति सरगौ मा राह करै,
कुछु देखुवा घूमि - घूमि आये ।
अपनी लड़किन के ब्याहे का,
दस पाँच जने हैं मुँहु बाये ॥

पर सबते ज्यादा लक्ष[2] बाइ,
मे सिउ सहाँय अचरजपुर के ।
उइ साथ सिपारिसि लाइ आये,
दुइ - चारि जने सिपतपुर के ॥

सुखदीन दुबे, चिथरू चउबे,
तिरबदी आये घुमर जी ।

१—लगभग । २—इच्छुक ।

कुञ्जी पण्डित निरधिन पांड़े,
बड़कये अवस्थी खुचर जी ॥

संकर उपरहितौ बोलि परे,
तुम्हरे तौ तनिकौ ज्ञान नहिन ।
यह संपति को बयपरी भला,
तुम्हरे याकौ सन्तान नहिन ॥

तब अकिल न ठीक रही ।
बात ना हमते जात कही ॥

म्वाछन का जरते छोलि छोलि,
देही के रवावाँ झारि दीन ।
भउँहन की बवारै साफ भईं,
मूड़े मा पालिस कारि कीन ॥

देहीं मा उपटनु लगवावा,
फिरि कीन पलस्तर साबुन का ।
अब चमक दमक माँ मातु कीन,
हम छैल चिकनियाँ बाबुन का ॥

दीदन मा काजरू मँगवावा[1],
माथे मा टिकुवा कार-कार ।
देही मा जामा डाटि लीन,
मूड़े मा पगिया कै बहार ॥

१—लगवाया

फिर गरे मँ कण्ठा हिलगावा,
जंजीर लटकि आई छाती।
मानौ अरहरि की टटिया मा,
लटका है ताला गुजराती॥

सब कीन्ह्यों रसम सही।
बात ना हमते जात कही॥

जब सँझलउखे[1] पहुँचा बरात,
कुछ जन आये हमरे नेरे।
बइसाखी मुसकी छाँड़ि-छाँड़,
बतलाय लागि अस बहुतेरे॥

दुलहा की दुलहा का बाबा,
जेहिं मूड़े मौरु धरावा है।
यहु करै बियाहु हियाँ कइसे,
मरघट का पाहुनु आवा है॥

ओंठे पर याको म्वाछ नाहिन,
यहि सफाचट्ट करवावा है।
बस जाना दूसरी दुलहिन कै;
यहु तेरही कइकै आवा है॥

पीनस चढ़ि अइसे सोहि रहें,
मानो मिलिगा कैदी हेरान।

१—सायंकाल

कैधौं घिरवा के भलकुर ते,
यहु झाँकत है खूसट पुरान ।।

बसि यही तना अपमान भरा,
कानन मा परीं बहुत बोली ।
जा हमरे मांगा ब्याह किहिनि,
जइसे बन्दूकन की गोली ।।

अब जियरा माँ जिरजिरी बढ़ी,
नाहिं शंकर पारबती के ऊपर ।
जो बहु बिधि ते समुझाय पठैं,
खइ आवा अइसि बिपति हम पर ।।

का जानसि न जात सही ।
बात ना हमतें जात कही ।।

जब पहरुआ भरी राति बीति,
तब भँवरिन की बारी आई ।
सब काम रतौंधिन मारि दीन,
दीपक आगे धुँधुरी छाई ।

पण्डितउँ बात बनाय कहा,
हमरी कइतौं दस्तूर यहै ।
भँवरिन मा बर के साथ-साथ,
मैगी हुइ एक जरूर रहै ।।

उपरहितैं अँगदर[1] कामु कीन,
वहि दुइ नेगिन का ठढ़ियावा ।
जिन हमका पकरि पखउराते,
फिर सातौ भँवरा घुमवावा ।।

सतईं भँवरी मा पाँव ग्वार,
परिगा बेदी के गड़वा मा ।
जरि गयेन जोर ते उचकि परेन,
अधपवा अइस भा तरवा मा ।।

हम बका भिका कहि दीन अरे,
ई नेगा हैं बिन आँखिन के ।
बस यतना कहतै हमरे मुँह,
कुछु घुसिगे पखना पाँखिन के ।।

हम हरबराय कै थूकि दीन,
उइ अखना पखना रहैं जौन ।
सब गिरगे नेगिन के ऊपर,
ई करै रतउँधी चहै जौन ।।

नेगा बोले यह बात कइसि,
तुम हमरे ऊपर थूकि दिहेव ।
हम कहा कि बदला लीन अबै,
तरवा हमार तुम फूँकि दिहेव ।।

१—बहुत बड़ा

ई विधि ते लाज रही।
बात ना हमते जात कही॥

जब परा कल्याणा सँभलउखे,
तब फिरि बिपदा भारी आई।
छत्तीसा लइगा चउकै मुलु,
पाँयन ते पाटा खिसुवाई॥

भगवान कीन पाटा मिलिगा,
मुलु खम्भा माँ भा मूड़ु भट्ट।
बटिया सोहराय अड़उखे[1] माँ,
पाटा माँ बइठेन झट्ट पट्ट॥

पर मुँहु देवाल तन कइ बइठेन,
बिन दीदन सोना माटा है।
तब परसनहारी बोलि परी,
बच्चा पाछे तन टाठी है॥

हम कहा कि हमरेव आँखी हैं,
चहुँ अलँग निगाहैं फेर रहेन।
है बड़ी सफेदी पोताई यह,
सो हम देवाल तन हेरि रहेन॥

बस ई विधि कइकै बतबनाव,
टाठी कोधी समुझाय गयेन।

---

[1]—आड़

बिन दाँतन चाबी कौरु ककस,
सब पानी घूँट नघाय रहेन ॥

जब दूध बिलारी अभियावा,
तब परसनहारी हाँकि कहिसि ।
मरगइली नठिया गाड़ी यह,
ऊपर कै साढ़ि चाटि लिहिसि ।

हम कहा बकौना जानि बूझि,
ना हम यहिका दुरियावा है ।
घरहू माँ सदा बिलारिन का,
हम साथै दूधु पियावा है ॥

ऊपर ते ऊपर चुपरु[1] कीन,
भीतर से जियरा जिरजिरान[2] ;
जब जाना साढ़ी नहीं रही,
तब तौ सूखे आधे परान ॥

पर परसनहारी टाठी मा,
जब हाथे ते पूरी डारा ।
हम जाना आई फिरि बिलारी,
मूड़े मा पाटा दइ मारा ॥

१—ऊपरी बातें, २—कोपित हुआ।

सीमेन्ट उखरिगै मूड़े कै,
तब रसोइँदारिन रोई है।
सब भेद रतउँधी का खुलगा,
चालाकी सारी खोई है।।

ना कच्चा हँड़िया बार-बार,
कोहू ते चढ़ै चढ़ायेते।
अधभूखे भागेन समझि गयेन,
ना बनिहै बात बनायेते।।

अब बिगरी रही सही।
बात ना हमते जात कही।।

यह छीछाल्यादरि याखो तौ

लरिकउनू बी० ए० पास किहिनि,
पुतहू का वैरु ककहरा ते।
यह करिया अच्छरु भैंसि कहै,
यह छीछाल्यादरि याखौ तौ।

दिनु राति बिलइती बोली माँ,
उइ गिटपिट गिटपिट बोलि रहे।
बहुरेंवा सुनि - सुनि सिटपिटाति,
यह छीछाल्यादरि याखौ तौ॥

लरिकऊ कहिनि वाटर[1] दइदे,
बहुरेवा पाथर लइ आई।
यतने मा मचिगा भगमच्छरु,
यह छीछाल्यादरि याखो तौ।

१—पानी।

उन अँगरेजी मा फूल[1] कहा,
वह गदगदु होइगे फूलि-फूलि।
उन डैमफूल[2] कहि डाटि दीन
यह ओछाल्यादरि याखौ तौ।

बनिगा भोजन तब थरिया मा,
उन लाय धरै छूरी काँटा।
डरि भागि बहुरिया चउका ते,
यह ओछाल्यादरि याखौ तौ।

लरिकऊ चले असनान करै,
तब साबुन का उन सोप[3] कहा।
बहुरेवा लइकै सूपु चली,
यह ओछाल्यादरि याखौ तौ।

१— मूर्ख। २—गाली। ३—साबुन।

धोखा

हम गयेन याक दिन लखनउवै,
कक्कू संजोगु अइस परिगा।
पहिलेहे पहिल हम सहरु दीख,
सो कहूँ कहूँ धोखा होइगा—

जब गयेन नुमाइसि घाखै हम,
जहँ कक्कू भारी रहै भीर।
दुइ तोला चारि रुपइया कै,
हम बेसहा[1] सोने कै जँजीर॥

लखि भईं घरैतिन गलगल[2] बहु,
मुलु चारि दिनन माँ रँग बदला।
उन कहा कि पीतरि लइ आयो,
हम कहा बड़ा धोखा होइगा॥

म्वाछन का कीन्हे सफाचट्ट,
मुहुँ पाउडर और सिर केस बड़े।
तहमत पहिने अंडी ओढ़े,
बाबू जी याकै रहैं खड़े॥

१—खरीदा। २—मगन।

हम कहा मेम साहेब सलाम,
उइ बोले चुप बे डैम फूल।
मैं मेम नहीं हूँ साहेब हूँ,
हम कहा फिरिउ धोखा होइगा॥

हम गयेन अमीनाबादै जब,
कुछु कपड़ा लेय बजाजा मा।
माटी कै सुघरि मेहरिया असि,
जहँ खड़ी रहै दरवाजा मा॥

समझा दुकान कै यह मलकिनि,
सो भाव-ताव पूछै लागेन।
याकै बोले यह मूरति है,
हम कहा बड़ा धोखा होइगा॥

घँसि गयेन दुकानै दीख जहाँ,
मेहरैऊ याकै रहैं खड़ी।
मुँह पउडर पोते उजर-उजर,
औ पहिने सारी सुघर बड़ी॥

हम जाना मूरति माटी कै,
सो सारी पर जब हाथु धरा।
उइ झझकि मकुरि खउख्याय उठीं,
हम कहा फिरिउ धोखा होइगा॥

हरिशंकर शर्मा

जन्म—भाद्रपद कृष्ण ६, संवत् १९५० वि०

जन्मस्थान:—हबुआ गंज, अलीगढ़

जन सेवक, कवि, पत्रकार तथा साहित्यकार

भूतपूर्व सम्पादक—आर्यमित्र, निराला, सैनिक, आदि।

अध्यक्ष—पत्रकार सम्मेलन, प्रयाग १९४६। कितने ही संस्थाओं के सदस्य, १९४२ में जेलयात्रा, आगरा नागरी प्रचारणी सभा के निर्माण में सहायक, साहित्य पुरस्कारों के निर्णायक आदि।

प्रकाशित पुस्तकें:—चिड़ियाघर, पिंजरापोल, घासपात, रामराज्य आदि हास्यरस की पुस्तकें। रस रत्नाकर, उर्दू साहित्य परिचय, हिन्दुस्तानी कोश आदि साहित्यिक तथा कितनी ही पाठ्य पुस्तकें।

करम फोड़ कम्बख्त राय

१

पढ़ कर अँगरेजी भरपूर,
भारतीयता कर दी दूर,
निज संस्कृति का मेंट निराला,
बन बैठा बौड़म विद्वान।

२

टूटी कमर झुक गये कन्ध,
हुआ तीन चौथाई अन्ध,
सूखा पेट, सिकुड़ कर आँत,
पिचके गाल, चमकते दाँत।

३

'साइन्सों'[1] को गया सपोट,
'कैमिस्ट्री'[2] सब डाली घोट,
पका न पाया रोटी – दाल,
क्रिया कुशलता का यह हाल।

१–विज्ञान। २–रसायन।

४

अर्थ-शास्त्र का हूँ आचार्य्य,
फिरूँ खोजता सेवा-कार्य्य,
बन जाऊँ 'दासों का दास',
दे दे कोई रुपये पचास।

५

'हिस्ट्री'[1] चाट, भखा भूगोल,
पर, इनका कुछ मिला न मोल,
याद रही है बस यह बात–
'हिन्दी' थे 'वहशी' 'बदजात'।

६

रेखा, अंक बीज से विज्ञ,
कहलाया प्रसिद्ध गणितज्ञ,
तो भी बनियाँ करे कमाल,
ठगे, न तोले पूरा माल।

७

पाने को पूँजी की 'पर्स'[2],
पढ़ डाली सारी 'कामर्स[3],'
'बुक कीपिंग'[4] का भूका मार—
हुआ न मेरा बेड़ा पार।

१–इतिहास। २ बटुआ। ३ वाणिज्य। ४-बहीखाता।

८

मुन्डी पढ़े करै आनन्द,
बैठे लिखें, लगाय मसन्द,
पर, मैं हूँ बिलकुल बेकार,
आफ़िस मिले न साहूकार।

९

बना डाक्टर आया जोश,
भर दूंगा सम्पति से कोश,
पर पेशेंट[1] न आवें पास,
कह-कह मुझको 'खब्बूहवास'।

१०

'टीचर' बना मनाया हर्ष,
ज्यों - त्यों काटा पहला वर्ष,
छात्र पढ़ाए करके टेक-
सौ में पास हुआ बस एक।

११

लेकर कर्ज किया व्यापार,
बेचे बिसकुट, सेव, अनार,
किये न लोगों ने 'पेमेंट[2],
घाटा सहा, 'सेंट परसेंट'[3]।

१-रोगी। २-भुगतान। ३-शत प्रतिशत।

१२

अखबारों की उन्नति देख,
लिखने लगा लेख पर लेख,
छपा न कोई भी कम्बख्त,
है 'एडीटर'[१] ऐसे सख्त।

१३

'प्रीचर'[२] 'प्रीस्ट'[३] बना मन मार,
काटे मास तीन या चार,
करता रहा 'गौड'[४]-गुण-गान,
गाते-गाते थकी जबान।

१४

मिलता नहीं कहीं कुछ काम,
पास नहीं है एक छदाम,
ऐसे कुसमय में करतार,
सुन लो नीचे लिखी पुकार—

१५

'लीडर'[५] बनूँ, फिरूँ स्वच्छन्द,
करदो द्वार दुखों के बन्द,
स्वार्थ और परमार्थ पसार,
करता रहूँ देश उद्धार।

१—सम्पादक २—उपदेशक। ३—पुरोहित। ४—ईश्वर। ५—नेता।

रिश्वत रानी

'रिश्वत रानी' शीर्षक व्यंग्य गीत में रिश्वत रमणी की स्तुति नीचे लिखे गीत में की गयी है।

रिश्वत रानी, तेरी जय हो।
तुझको सब ने शीश चढ़ाया,
निर्धन धनियों ने अपनाया,
तेरा रूप सभी को भाया,
प्यारी तुझे न कुछ भी भय हो,
रिश्वत रानी तेरी जय हो।
तूने फाँसी से छुड़वाए,
अनगिनतों के प्राण बचाए,
तूने वे-वे काम कराए,
जिससे कभी न तेरा क्षय हो,
रिश्वत रानी तेरी जय हो।
न्यायालय में तेरा तप है,
धर्मालय में तेरा जप है,
दुनिया भर में तेरी खप है,
दश दिशि तेरा पुण्य उदय हो,
रिश्वत रानी तेरी जय हो।

कोरागायक—'कवि'

तू कवि या कोरागायक है !

तज कला गला पर तू निर्भर,
टेढ़ी - सीधी तुकबन्दी कर,
औंड़े - मौंड़े भावों को भर,

बन बैठा कविता नायक है—
तू कवि या कोरा गायक है ?

गाता है या घिघियाता है,
मुँह, आँखें, भौहें चलाता है,
क्या हाव - भाव दिखलाता है,

जकड़ा पकड़ा आ भायक है—
तू कवि या कोरागायक है !

छन्दों की छाती पर प्रहार,
रस कहाँ ; बरसता विष-फुहार,
कैसी ध्वनि कैसे अलङ्कार,

केवल स्वर बना सहायक है—
तू कवि या कोरागायक है !

पद हैं दो-तीन सुनाने को,
खुश करने धाक जमाने को,
धन पाने कीर्ति कमाने को,

सूझी विधि क्या सुखदायक है—
तू कवि या कोरागायक है!

हर गंगा

भ्रष्टाचार देव भगवान,
रहे तुम्हारी बढ़ती शान,
हम सब लोग तुम्हारे दास,
कभी न दीखें देव, उदास,
हर गंगा ।

चोर बजारी ने कर प्यार,
निश दिन किया अमित उपकार,
भर-भर रुपयों से भण्डार,
रंक बनाये साहूकार,
हर गंगा ।

धर्म कर्म 'थू-थू' धिक्कार,
दीन और ईमान बिसार,
बेईमानी का आधार,
बना मुक्ति मन्दिर का द्वार,
हर गंगा ।

बनी मुनाफ़ाखोरी धन्य,
तुझ-सी सती न देखी अन्य,
पटक रहा नोटों की पोट,
लूट रहे कस-कस लंगोट,
हर गंगा।

दौड़ रहे ट्रक ताबड़ तोड़,
बद-बद चोर बजारी होड़,
'कार' साधती सारे काम,
ले-लेकर तिकड़म का नाम,
हर गंगा।

बहुत दिवस बीते जिजमान,
चोर बजारी का दो दान,
सुन-सुन चर्चा हे दातार।
आया आज तुम्हारे द्वार,
हर गंगा।

सहे जेल के कष्ट अपार,
रखता हूं अतः अधिकार,
तुम तो हो मेरे प्रिय मित्र,
सिखला दो व्यापार विचित्र,
हर गंगा।

'परमिट' दो हो जाऊँ धन्य,
मिले न ऐसा अवसर अन्य,
साझा करो मित्र जी खोल,
खुले न किन्तु ढोल की पोल,
हर गंगा।

जय हो रुपयों की भरमार,
निकलें अपने दैनिक चार,
जनता पर प्रभाव विस्तार,
करूँ मोटरों पर अधिकार,
हर गंगा।

भरलूँ पूँजी से घर-द्वार,
अपनी कोठी अपनी कार,
धनियों को दे खूब लताड़,
हँसता रहूँ लेक्चर झाड़,
हर गंगा।

जनता समझे क्यों समान,
ध्रुव प्रह्लाद कहें मतिमान,
त्यागी कहे सकल संसार,
फिरूँ तपस्वी की धजधार,
हर गंगा।

रिश्वत रानी से कर मेल,
खेलूँ स्वार्थ सिद्धि के खेल,
हो खतरे खन्दक के पार,
दूं अफ़सर दल को ज्योनार,

हर गंगा।

हे कन्ट्रोल, सर्व गुण-खान,
करिये ऐसी शक्ति प्रदान,
ज्यों-त्यों ऐंठ-ऐंठ कलदार,
बनूँ धर्म का ठेकेदार,

हर गंगा।

कैसा धर्म कर्म का ढोंग,
यह तो है कोरा हड़बोंग,
धन में बसते हैं भगवान,
चूके मत मेरे जिजमान,

हर गंगा।

रखलूँ द्रव्य बटोर-बटोर,
देश-भक्ति का कर-कर शोर,
कभी-कभी कुछ कर दूं दान,
जिससे मिले सुयश सम्मान,

हर गंगा।

झोंक-झोंक आँखों में धूल,
करूँ मुनाफा खूब वसूल,
स्वार्थ सिद्धि का जप-जप मन्त्र,
रचता रहूँ नित्य षड्यन्त्र,
हर गंगा।

अपनाऊँ बढ़िया अखबार,
चन्द चपत चाँदी की मार,
छाप-छाप मेरा यश-चित्र,
हो जाएँ सब पत्र पवित्र,
हर गंगा।

द्रव्य-दास सम्पादक लोग,
पाकर धन का सुखद सुयोग,
किया करें नित कीर्ति बखान,
मुझ को मान गुणों की खान,
हर गंगा।

धन्धा-गान

बातों का धन-धन्धा प्यारा,
चन्दा बन्दा रहे हमारा।

कोठी - कार दिखाने वाला,
खुरचन - खीर खिलाने वाला,
घर - भर को हरषाने वाला,

भरता रहे रोज भण्डारा—
चन्दा बन्दा रहे हमारा।

सारा कर्ज चुकाया इससे,
बिगड़ा बजट बनाया इससे,
फिर नवजीवन पाया इससे

इससे पनपा पेट-पिटारा—
चन्दा बन्दा रहे हमारा।

जन-सेना की जान यही है,
नोट - पोट की खान यही है,
संस्था - रूप दुकान यही है,

हथकण्डों का पाश पसारा—
चन्दा बन्दा रहे हमारा।

'धर्म'-'धर्म' कह चिल्लाते हैं,
देश-भक्ति के पद गाते हैं,
रोते – हँसते गुर्राते हैं,
छिपा इसी में कौशल सारा-
चन्दा बन्दा रहे हमारा।

"जन - जीवन की जिम्मेदारी,
नेता के सिर पर है सारी,"
सुन यह शब्द योजना प्यारी।
बहा रही जनता धन-धारा-
चंदा बंदा रहे हमारा।

जैसे हो वैसे धन आए,
गौरव - मान भले ही जाए,
मिल-मालिक करके दिखलाए,
हो तिकड़म का सबल सहारा-
चंदा बंदा रहे हमारा।

'क्या' आडिट' हिसाब क्या खाता
सब से तोड़ - फोड़कर नाता,
लगा रहे दौलत का ताँता,
कैश, चैक, मनिआर्डर द्वारा-
चंदा बंदा रहे हमारा।